वस्य पश्यं काव्यं न ममार न जीर्यति॥

हस्त लिखित

विषय सूची

चित्र-सूची.

हंसी

(लेखक - श्री याघी)

हंसी! तुम्हीं मुझ को बतलाओ, कौन तुम्हारा असली धाम।
मैं ने तुम्हें बहुत स्थानों पर करते देखा है विश्राम ॥

प्रेमी जन के मुख मण्डल पर छुपे हुवे चिर जीवन दूत।
तुम नीरव अव्यक्त भाव से कुछ ऐसी करती करतूत।
बिछुड़े फिर से मिल जाते हैं, फिर व्यथा का होता अन्त।
सूखे हृदय सरोवर में फिर भर जाता है स्नेह अनन्त ॥
ईर्षा भरे द्वेष से जलते हृदयों पर तूं परदा डाल।
कभी दिखाया करती पैशाचिक नृत्यों का दृश्य कराल ॥
नव युवती के फुल्ल वदन पर दुर्गम परदों को कर पार।
ऐ बेशर्म! फिरा करती तू, बिना किसी संकोच विचार ॥
जहां अकेले प्रेमी मिलते, छुप छुप करते प्रेमालाप।
उन की क्षणिक-स्निग्धता लख कर तू करती भारी सन्ताप ॥
जलती क्रोधानिल पर बनती, कभी कभी तू घृत की धार।
कभी बुझा कर जलन हृदय की, भर देती है शान्ति अपार ॥
जहां नहीं भाषा जा सकती, वाणी की हो जाती हार।
उन अनुपम भावों के ऊपर, तेरा ही रहता अधिकार ॥
ऐ मूकों की अद्भुत वाणी! तुझ को ही पा कर यह लोक।
प्रकट किया करता है, दिल की करुणा मैत्री प्रेम अरु शोक ॥
किस अज्ञात शह से आकर सारे मुख भर देते ... ।
क्षण भर रहती; फिर भग जाती, तेरी महिमा अगम अपार ॥

हरि-भजन

हरि को नहिं मूढ़ भुलाना रे।
यह तन माटी का पुतला है माटी में मिल जाना रे ॥ ध्रुव ॥

× × ×

जल बुद बुद, हिम उपल, सरिस यह दृग अञ्चल छिप जाना रे।
इस पिंजड़े का प्रिय पक्षी वह अन्त कहीं उड़ जाना रे ॥१॥ हरि को०

× × ×

यह जग अनुपम भूल भुलैया, उलझ उलझ मर जाना रे।
फंसा बीच मृग तृष्णा के तू, भटक भटक रह जाना रे ॥२॥ हरि०

× × ×

ले छोटी सी जीवन नौका भव वारिधि में जाना रे।
भीषण भरी भंवर भीर से, किसी भांति बच जाना रे ॥३॥ हरि को०

× × ×

ममता-मोह मद्य को पीकर कुमति कुपथ मत जाना रे।
सम्हल सम्हल कर पग धर मग में पांव फिसल गिर जाना रे ॥४॥ हरि०

× × ×

प्रीतम तो उर अन्तर बैठा खोजत कहां अजाना रे?
खोल विवेक विलोचन हरि को मन मन्दिर पा जाना रे ॥५॥ हरि को०

मनु और इन्द्र

प्रत्येक भारतीय ने "मनु" महाराज का नाम कई बार सुना होगा। उन्हीं के नाम से 'मनुस्मृति' नामक ग्रन्थ प्रसिद्ध है जिस में वैयक्तिक, सामाजिक, धार्मिक, तथा राजनैतिक नियमों का विधान है। प्रायः यह समझा जाता है मनु महाराज कोई एक व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने भारत में शासन के नियमों का निर्माण कर अव्यवस्था को दूर किया। प्रकरण-प्राप्त न होने के कारण हम यहां पर उस विषय की आलोचना नहीं करना चाहते। हमारा मत यह है कि मनु नाम से कोई एक व्यक्ति हुए हों, ऐसा नहीं है। व्यास गद्दी का नाम पड़ गया, शङ्कराचार्य भी गद्दी का नाम ही है; इसी प्रकार 'मनु' शब्द भी एक गद्दी के लिये ही प्रयुक्त होता रहा है। 'मनु' शब्द की व्युत्पत्ति 'मन्' धातु से है। संस्कृत में इस शब्द का अर्थ मनन करना, नियम बनाना अथवा legislate करना है। मनु-शब्द का भावार्थ ही नियामक अथवा legislator है। इन अर्थों में 'मनुस्मृति' उस ग्रन्थ का नाम है जिस में भारत के प्रसिद्ध मनुओं के बनाए हुए नियमों का संग्रह हो। मनु जो कोई भी बन सकता था परन्तु इस लिये देश देशान्तरों के शासन नियमों का तुलनात्मक अध्ययन करने की योग्यता अपेक्षित होती थी। जिस व्यक्ति में इतनी योग्यता पायी जाती उसी को 'मनु' अर्थात् 'legislator' की पदवी से विभूषित किया जाता था और उस के निर्दिष्ट किये हुए नियमों पर यथावत् विवेचन कर के उन का समाज में प्रयोग आरम्भ हो जाता था। जिस प्रकार ईजिप्ट के राजाओं को फ़ैरोह कहा करते थे, पारसियों के शक्तिशील राजाओं को कसरसीज़ कहते थे, हिन्दुओं में शस्त्र से देश-रक्षा तथा देश-विस्तार करने वालों को क्षत्रिय नाम से पुकारते थे इसी प्रकार नियमों के निर्माण में प्रचुर गति रखने वाले विद्वानों को मनु कहा करते थे।

ईजिप्शियन, यहूदी तथा ग्रीक हमारे कथन की पुष्टि करते हैं। ईजिप्ट को शासन के नियम देने वाला मेनीज़ (Manese) था जो कि मनु के अतिरिक्त दूसरा कोई न था। हमारे कथन का यह अभिप्राय नहीं कि भारतवर्ष से मनु महाराज ही ईजिप्ट चले गये थे। अभिप्राय इतना ही है कि भारतवर्ष में नियमों की रचना करने वाले को मनु कहा जाता था। इस लिये ईजिप्शियन लोगों ने-

भी अपने देश में शासन की व्यवस्था करने वाले को 'मेनीज़' नाम देना पसन्द किया। यहूदियों में नियमों का विधान करने वाला (law-giver) 'मूसा' (Moses) है। बाइबल के पुराने अहदनामे के अनुसार मूसा ही परमात्मा (जिहोवा) के पास जा कर दस आज्ञाओं (Ten commandments) को लाया था। यहूदियों ने भी अपने नियमों के उपदेष्टा को मनु का ही नाम दिया जो कि उन की भाषा में 'मूसा' के रूप में प्रचलित हुआ। ग्रीक लोगों का नियम-प्रवर्तक माइनोस (Minos) कहलाता है। ग्रीक इतिहास के अनुसार 'माइनोस' पूर्व की तरफ से क्रीट शहर में आ कर रहने लगा। उस की विद्वत्ता से प्रभावित हो कर शहर के निवासियों ने उस से नियन्त्रण के नियम बना देने का अनुरोध किया। इस अनुरोध को देख कर उस ने उन से कुछ मोहलत ली और यात्रा करता हुआ ईजिप्ट जा निकला, ईजिप्ट में जा कर उस ने उस देश के नियमों का खूब बारीकी से अध्ययन किया। ईजिप्ट से लौट कर वह एशिया, पर्शिया आदि होता हुआ सिन्धु नदी के तटों पर भ्रमण करता रहा। इतने लम्बे चौड़े पर्यटन के अनन्तर वह फिर क्रीट को लौट कर चला गया जहां जा कर उस ने देश के लिये नियमों की रचना की। उन नियमों को सारे ग्रीस ने स्वीकार कर लिया। इन नियमों को पढ़ते हुए विद्यार्थी के हृदय में तरह २ के भाव उठते हैं। ग्रीस का वह विद्वान् ईजिप्ट के शासकों से मिलता हुआ भारत में पहुंचा। हो न हो, अवश्य ईजिप्ट के धुरन्धर पण्डितों ने उसे अपने पाण्डित्य को पूर्ण करने के लिये विद्या की खान भारतवर्ष की तरफ संकेत किया होगा। इसी लिये तो वह विद्वान् एशिया को पार कर सिन्धु के किनारों की खाक छानता रहा। जब सब देशों में भ्रमण कर देश को नियन्त्रण में रखने वाले नियमों का उस ने तुलनात्मक अध्ययन कर के ग्रीस की प्रजा के सन्मुख रखा होगा तो उस प्रजा ने भी स्वाभाविक तौर से उसे मनु (Minos) की पदवी से विभूषित किया होगा।

इस प्रकार समझ आ जाता है कि हिन्दुओं का 'मनु', ईजिप्शियनों का 'मेनीज़', ग्रीक लोगों का 'माइनोस' तथा यहूदियों का 'मोजेज़' — चारों के चारों एक ही मनु शब्द के अपभ्रंश हैं और उन २ देशों में व्यवस्था के नियम बनाने वाले भिन्न २ व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त होते रहे हैं। 'मेनीज़' — 'माइनोस' — और 'मोजेज़' ये नाम बचपन से ही नहीं रखे गये थे परन्तु जब वे २ व्यक्ति नियमों के निर्माता बने तब भारतवर्ष की प्रचलित प्रथा के अनुसार उन का नाम मनु या legislator रखा गया।

जिस प्रकार 'मनु' का नाम भिन्न २ रूप धारण कर संसार की समुन्नत सभ्यताओं का शासन करता रहा इसी प्रकार 'इन्द्र' देवता का विचार भी प्रायः सभी पुराने धर्मों में पाया जाता है। दूसरे धर्मों में इन्द्र का स्थान समझने के लिये हमें भारतीय देवमाला में इन्द्र का स्वरूप समझ लेना चाहिये। संस्कृत में इन्द्र के लिये 'द्यौः' — 'दिवस्पितर' — 'इन्द्र' - 'नरी' आदि शब्द पाये जाते हैं। पुराणों ने इन्द्र को स्वर्ग का अधिपति बत-

जाता है — वह स्वर्ग का राजा है, देवताओं में बहुत ऊँचे स्थान का अधिकारी है। इन्द्र के कब्जे में बहुत सी अप्सराएं भी हैं। साधु, सत्पुरुषों का व्रत भङ्ग करने के लिए इन्द्र उन का दुरुपयोग करता ही रहता है। द्युलोक में उस का निवास स्थान है। वह बिजुली की कड़क में अपने उग्र-रूप को प्रकट किया करता है।

'द्यौः' के विसर्गों को यदि 'स' कर दिया जाय तो 'द्यौः' का रूप 'द्यौस' हो जाता है। 'द्यौस' का अपभ्रंश 'ड्यूस' — 'ज़्यूस' होना कठिन नहीं है। 'ज़्यूस' बन कर ग्रीस में यही देवता 'ज़्यूस' (Zeus) बन गया और पुजने लगा। ग्रीक-शब्द शास्त्र के अनुसार Zeus शब्द की उत्पत्ति Dios से होती है अतः यह मानने में तनिक भी सन्देह नहीं रह जाता कि ग्रीक लोगों का सब से मुख्य देवता Zeus वैदिक 'द्यौस' का ही अपभ्रंश है। ग्रीक लोगों को छोड़ दें, रोमन लोगों के यहां भी इन्द्र देवता की पूजा होती देखी है। रोम का मुख्य देवता 'जुपिटर' (Jupiter) था। यह 'जुपिटर' — 'द्यु पिटर' — 'दिवस्पितर' नहीं तो और क्या है? इन्द्र देवता ही 'जीयस' नाम से ग्रीस में तथा 'जुपिटर' नाम से रोम में पूजा जाने लगा, इस में क्या अब कुछ भी सन्देह रह जाता है? इन सब शब्दों की परस्पर समता विलक्षण है, उसे देख कर किसी भी रूप से आकस्मिक नहीं कहा जा सकता। इस के अतिरिक्त इन भिन्न २ देवताओं को सम्मान भी तो इन्द्र का सा दिया गया है। इन सब से काम भी वही कराये गये हैं। रोम के प्रसिद्ध कवि ओविड ने जुपिटर को देवताओं में मुख्य दर्शाया है। सारी देवमण्डली उसे अपना मूर्धन्य मानती है। जुपिटर बारम्बार बिजली की सी गर्जन करता है, — स्मरण रहे कि इन्द्र भी वज्री है — वज्र अर्थात् 'विद्युत' के शस्त्र को धारण कर नभोमण्डल में हृदय को कंपा देने वाले घनघोर नाद को किया करता है। ओविड ने जुपिटर को आचार में भी शिथिल दिखाया है। जब हम स्मरण करते हैं कि इन्द्र के दरबार में भी अप्सराओं की भरमार रहा करती थी, वह दूसरों के आचारों को गिराने के लिये प्राणपन से प्रयत्न किया करता था और साथ ही स्वयं भी कई बार आचार-भ्रष्टता के गढ़ों में गिरा करता था तब तो हमें इस बात में ज़रा भी सन्देह नहीं रह जाता कि रोमनों का जुपिटर पुराणों के इन्द्र देवता के अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं है।

ग्रीकों का 'जीयस', रोमनों का 'जुपिटर' हिन्दुओं के इन्द्र देवता के ही दूसरे नाम हैं। इस के अतिरिक्त यहूदियों का 'जिहोवा' भी 'द्यौः' का अपभ्रंश मालूम पड़ता है। जिस प्रकार 'द्यौः' का अपभ्रंश 'जो' हो सकता है उसी तरह 'जिहोवा' भी हो सकता है — शब्द-समानता तो इस कल्पना में समर्थक है ही परन्तु जिहोवा का वर्णन भी उसे हिन्दुओं के 'द्यौः' [इन्द्र] का ही अपभ्रंश सिद्ध करता है। यहूदियों के पुराने अहदनामे [Old testament] में जिहोवा का वर्णन बादल, आग और बिजली के रूप में पाया जाता है। पुराना अहदनामा तो कम से कम इस विषय में यही परिपुष्ट सम्मति देता है कि 'जिहोवा' जो कोई भी हो — वह वैदिक देवता तो अवश्य था। बाइबल की Exodus पुस्तक की तीसरे अध्याय की चौथी आयत में 'जिहोवा'

मूसा को सम्बोधन कर के कहता है कि मेरा नाम "I am that I am" है। इस के निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग है वे ध्यान देने योग्य हैं।—ehyeh asher ehyeh अहः अशर अय। पारसियों की जिन्दावस्था में परमात्मा अपने बीस नाम गिनाता हुआ प्रथम नाम 'अह्मि' गिनाकर आगे चल कर 'अह्मि यद् अह्मि' यह नाम गिनाता है। पारसी साहित्य से परिचिति रखने वाले पाठकों को विदित होगा कि संस्कृत का 'स'- जिन्द-भाषा में जा कर 'ह' बन जाता है। इस प्रकार 'अह्मि यद् अह्मि' का रूप — 'अस्मि यद् अस्मि' — यह बनता है। यह नाम ही यहूदियों के हां उस रूप में पाया जाता है जिस का हम ने ऊपर उल्लेख किया परन्तु प्रारम्भ में यह यजुर्वेद से लिया गया। यजुर्वेद के २म अध्याय का १७वां मन्त्र है, "इदमहं य एवास्मि सोऽस्मि"। क्या यह मन्त्र और पारसियों का 'अह्मि यद् अह्मि' एक ही नहीं है? यदि एक ही है तो मानना पड़ता है कि पारसियों तथा यहूदियों ने इसी मन्त्र के आधार पर अपने देवता का नाम 'अह्मि यद् अह्मि' — 'I am that I am' रखा। कम से कम इस में सन्देह नहीं रह जाता कि कि यहूदियों का 'जिहोवा' कोई न कोई वैदिक देवता था। जो कुछ हम ऊपर लिख आये हैं उस के आधार पर हम यह कहने का साहस करते हैं कि यह देवता इन्द्र होगा। इन्द्र का ही 'द्यौः' नाम ग्रीकों के यहां 'ज़ीयस' पड़ा, इन्द्र ही का दिव' ...' नाम रोमनों के यहां 'जुपिटर' पड़ा और इन्द्र का 'द्यौः' नाम ही यहूदियों में जा कर 'जिहोवा' पड़ गया।

तुलनात्मक धर्म विचार की आवश्यकता

सज्जनगण! आप इस शीर्षक को पढ़ते ही कह उठेंगे कि इस की कोई आवश्यकता नहीं। धर्म का तात्पर्य मनुष्य को अनन्त शक्ति परमात्मा से मिलाना है। धर्म क्रिया में लाने लायक है। इतना काम एक धर्म से भी सिद्ध हो सकता है। यदि हमें वेदों से ही यह निश्चय हो जाता है कि पशु हिंसा बुरा काम है तो बाइबल और कुरान के पन्ने पलटने से क्या लाभ। इस से तो हम केवल समय व्यर्थ गवाएंगे।

अपने पक्ष को पुष्ट करने से पूर्व मैं आप के सामने गेटे का वाक्य रख देना चाहता हूं। वह कहा करता था - He who knows one language knows none. इसका यह तात्पर्य नहीं कालिदास तथा शेक्सपीयर जैसे कवि संस्कृत तथा अंग्रेजी भी न जानते, क्योंकि वे संस्कृत तथा इंग्लिश के सिवाय किसी भाषा से परिचय न रखते थे। इस का अभिप्राय यह होता है कि वे शब्दों के भाव को इतना नहीं समझ सकते जितना बहुभाषावेत्ता जान सकता है।

पाठकगण! आप को यह जान कर और भी अधिक आश्चर्य होगा कि प्रो. मैक्समूलर ने यह इजहार कर दिया है कि He who knows one religion knows none. इसी वाक्य की पुष्टि में मैं आप के सामने कुछ विचार पेश करना चाहता हूं। पूर्व इस के कि मैं अपने विषय पर आऊं मैं धार्मिक दृष्टि से मेरा क्या अभिप्राय है यह स्पष्ट कर देना चाहता हूं।

तुलनात्मक धर्म की आवश्यकता

'धर्म' शब्द दो अर्थों में प्रयुक्त होता है।
(क) जब हम यह कहते हैं कि आजकल भारतवर्ष में हिन्दूधर्म, जैन धर्म, पारसी धर्म आदि प्रचलित हैं उस समय हमारा यह मतलब होता है वे सिद्धान्त जो प्रथाओं या पुस्तकों के आधार पर माने जाते हैं वे भारतवर्ष में प्रचलित हैं। इसी लिए जब हम यह कहते हैं कि सोमदत्त इस्लाम से वैदिक धर्म में आ गया, तब हम धर्म शब्द को अर्थ इसी अर्थ में प्रयुक्त करते हैं।

(ख) "आहारनिद्राभयमैथुनं च सामान्यमेतत्पशुभिर्नराणाम्। धर्मो हि तेषामधिको विशेषः धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः॥" इस श्लोक में धर्म शब्द उपर्युक्त अर्थ में नहीं आया। यहां धर्म शब्द से हिन्दू धर्म, बौद्ध धर्म आदि अभिप्रेत नहीं प्रत्युत उच्च तथा उत्तम आचरण को ही यहां धर्म शब्द से कहा गया है।

धर्म के इन दो स्वरूपों को दो भिन्न २ नाम दिये गये हैं।
(क) comparative religion.
(ख) Theoratical religion.

अब आप को मेरे इस उपक्रम का मतलब समझ आ गया होगा। जब मैंने यह कहा कि 'He who knows one religion knows none' तो यहां धर्म (religion) शब्द से पहली प्रकार का धर्म अर्थात् comparative religion ही अभिप्रेत है। Theoratical religion के लिए सब धर्मों का ज्ञान आवश्यक नहीं। यदि मधु घर में ही मिल जाए तो पर्वत पर जाने की कोई आवश्यकता नहीं। हां बहुत धर्मों से सम्मत होना किसी बात की सच्चाई जानने की कसौटी है, इस लिए theoratical religion के लिए मेरा इनकार नहीं। मैं तो इतना कहता हूं कि comparative religion के लिए सब धर्मों का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। यदि हम अपनी धार्मिक पुस्तकों के वास्तविक अभिप्राय को जानना चाहते हैं तो अन्य धर्मों का ज्ञान इस बात में बड़ा सहायक होगा।

संसार के धर्मों की आलोचना करके मैक्समूलर इस परिणाम पर पहुंचे हैं—"Where ever there are traces of human life there are traces also of religion." पहले कुछ आदमियों का विश्वास था कि अफ्रीका की एक नाम जाति का कोई धर्म नहीं था परन्तु और अधिक खोज से यह माना जाने लगा है कि वे भी एक दैवीय शक्ति में विश्वास करते थे। इस स्थापना को मानकर कि धर्म के बिना मनुष्य का जीवन असम्भव है यह देखना है कि संसार के सब धर्मों में कोई समानता है या नहीं। यह तो निर्विवाद है कि धर्मों में परस्पर सम्बन्ध है। झगड़ा इस बात पर है कि इन सब धर्मों के आदि स्रोत कितने हैं और कौन हैं। मैक्समूलर आदि पाश्चात्य विद्वान तो आर्यन धर्म, सेमेटिक धर्म तथा टूरेनियन धर्म, इस प्रकार तीन स्रोत मानते हैं परन्तु कइयों का विश्वास है कि सब धर्मों का आदि स्रोत आर्यन धर्म (वैदिक धर्म) है जिसकी धार्मिक पुस्तक वेद हैं।

जब यह भी मान लिया कि संसार के धर्मों में बड़ा सम्बन्ध है और प्रायः सब धर्म [illegible] एक श्रेणी या तीन श्रेणियों में विभक्त हो गये हैं तब यह स्वीकार करने में, मैं समझता हूं, किसी को संकोच न होगा कि धर्म का वास्तविक स्वरूप समझने के लिए अन्य धर्म सहायक हो सकते हैं।

आजकल जितने धर्म प्रचलित हैं वे प्रायः प्राचीन हैं और वे प्राचीन भाषा के आवरण में ढके हुए हैं। भाषा कितनी अस्थिर व परिवर्तनशील है यह सब लोग भली प्रकार जानते हैं। जो शब्द पहले जिस अर्थ में आता था वह पीछे से भिन्न अर्थ में ही प्रयुक्त होने लग जाता है। संस्कृत में ऐसे शब्दों को इकट्ठा करके एक बड़ी पुस्तक तैयार की जा सकती है। इसी प्रकार और भाषाओं में भी ऐसे शब्द बहुतायत से मिलते हैं।

इसके सिवाय मुहावरे आदि भी बदलते रहते हैं। मुहावरे में प्रत्येक शब्द अपने अभिधार्थ में नहीं प्रयुक्त होते अपितु लाक्षणिक अर्थ में। इस को न जान कर लोग उस शब्द को उसी अर्थ के अभिधा अर्थ समझते हैं। और वेद मन्त्रों के गीत ऐसी दृढ़ स्थापना निःसंकोच होकर कर देते हैं। इसी कारण भिन्न २ भाषाओं का जानना आवश्यक है। जब सब धर्मों का एक स्रोत ही है तो एक बात को सब धर्मों ने भिन्न २ रूपों में प्रकट किया यह मानना पड़ता है। इस को स्वीकार करने से यह तो मानना पड़ता है कि एक धर्म को समझने के लिए अन्य धर्मों का अध्ययन करना आवश्यक है। हो सकता है कि जिन बातों को हमने धर्मशास्त्रों में आलंकारिक में तथा संक्षेप: रूप में रखा है वह किसी धर्म में स्पष्ट रूप में मिलती हो। उदाहरणार्थ, बहुत सी बातें पेश की जा सकती हैं। मैं यहाँ केवल बातें बताऊँगा। सबसे पहले मैं यह बताऊँगी कि पारसी धर्म ने क्या सहायता दी। पशुहिंसा के निषेध के सिवाय गो-शब्द के अर्थ निर्णय भी किसी हद तक कर सके। जिस भाव में गो का स्वरूप वर्णित किया है उसी ढंग में पारसी धर्म पुस्तकों में 'गौ' का स्वरूप वर्णित मिलता है। ज़िन्दावस्ता में वह वर्णित पढ़ कर मालूम होगा यह मानने को बाधित हुए हैं कि इसके आधार पर हम यह भी कह सकते हैं कि वेद में गो शब्द का अर्थ कि केवल प्राणिमात्र नहीं अपितु पृथिवी भी। इसी प्रकार ग्रीक, रोमन, मिश्र तथा मेसोपोटामिया आदि धर्म सहायक सिद्ध हुए हैं।

इस लिए मेरी सम्मति में गुरुकुल में इस आवश्यक विषय की बड़ी आवश्यकता है। अकबर बादशाह इसी सामग्री न प्राप्त करने के कारण इस से पूरा लाभ न उठा परन्तु आजकल तो पाश्चात्य विद्वानों के अनथक परिश्रम ने इस काम को सरल कर दिया है। हमें इस से पूरा फायदा उठाना चाहिए।

नास्तिक-वाद॥

आस्तिकवाद के विरोध में जो बहुत से वाद प्रचलित हैं उनमें बहुदेवतावाद, वेदान्तवाद तथा नास्तिकवाद मुख्य हैं। इन सबको यदि एक परिभाषा में कहा जाय तो अनीश्वरवाद कह सकते हैं। ये सब आपस में अनेक बातों में मतभेद रखते हुए भी इस बात में सहमत हैं कि पवित्रता, बुद्धिमत्ता तथा प्रेम आदि शुभ गुणों को धारण करने वाले किसी परमात्मा की पृथक सत्ता नहीं। इनमें नास्तिकवाद (Atheism) आस्तिकवाद (Theism) के बिलकुल विपरीत है। अतएव उसके स्वरूप तथा प्राबल्य पर सूक्ष्मरीति से विशेष विचार करना चाहिये।

नास्तिकवाद के प्रचारक इसका कोई निश्चित स्वरूप नहीं बतला सकते। इसके सिद्धान्तों के विषय में उनमें ही आपस में बहुत मतभेद हैं। तथापि इसे निम्न तीन प्रकार से समझा जा सकता है। १- अप्रमाणित-नास्तिकवाद (Dogmatic Atheism) २- संदेहात्मक नास्तिकवाद (Sceptical Atheism) 3- कुतर्कात्मक-नास्तिकवाद (Critical Atheism) जब बिना युक्ति और तर्क के हम दुराग्रहवश मान बैठें कि 'ईश्वर नहीं है' तो इसे अप्रमाणित नास्तिकवाद कहेंगे। किन्तु यदि तर्क तथा युक्ति का आश्रय लेते हुए भी कहा जाय कि चाहे 'ईश्वर हो या न हो वह मनुष्य के ज्ञान से परे है' अथवा 'उसके स्वीकार करने में कोई दृढ़ प्रमाण नहीं' तो इसे क्रमशः संदेहात्मक नास्तिक तथा कुतर्कात्मक नास्तिकवाद कहेंगे। किन्तु यहाँ ये ध्यान रखना चाहिये कि नास्तिकवाद के ये तीनों प्रकार कभी भी अपने विशुद्धस्वरूप में नहीं पाये

जाते। इनका पारस्परिक संकर होना अत्यन्त स्वाभाविक हो जाता है। संदेहात्मक नास्तिकवाद तथा प्रत्यक्षात्मक नास्तिकवाद को पृथक् २ देखना अत्यन्त कठिन है; और अप्रमाणित नास्तिकवाद तो स्वरूप में अत्यन्त अप्रमाण होता है।

यहां पर कई लोग नास्तिकवाद की सत्ता में ही सन्देह करते हैं। उनका कथन है कि जब बाह्य-संसार का क्रम तथा नियम और मनुष्य की अपनी प्रकृति भी ईश्वर के अस्तित्व को स्पष्ट उद्घोषित कर रही है, तो यह कैसे सम्भव हो सकता है कि कोई मनुष्य नास्तिक रह सके। किन्तु यह शंका व्यर्थ है। जब कई मनुष्य सच्चे दिल से अपने अन्धविश्वासों पर दृढ़ रहते हैं तो कई ऐसे भी हो सकते हैं जो कि उतने ही सच्चे दिल से परमात्मा का भी निषेध कर सकें; अतएव हमारा कोई अधिकार नहीं कि हम ब्यूश्नेर, गोरटनफ्रौरेन्स तथा हेडला प्रभृति विद्वानों के गम्भीर खुले तथा साफ शब्दों में कहे गये परमात्मा के निषेधपरक विचारों पर अविश्वास प्रकट करें। तथापि यह सच है कि आजतक किसी बड़े से बड़े नास्तिक विद्वान् ने भी परमात्मा की नास्तिता को सिद्ध करने का प्रयत्न नहीं किया। सब नास्तिकों का बड़े से बड़ा यही प्रयत्न रहा है कि वे अपने अविश्वास को उचित ठहराने के लिये परमात्मा को सिद्ध करने वाली युक्तियों का खण्डनमात्र करें। वास्तव में प्रत्येक पदार्थ की नास्तिता का खण्डन करना होता भी अत्यन्त कठिन है। किसी अज्ञातप्रदेश में जाकर वहां पदचिन्हों आदि की साक्षी से प्राणियों का निवास बड़ी सरलता से प्रतिपादित किया जा सकता है। किन्तु यदि कोई कहे कि यह शून्य देश है – यहां प्राणियों

का निवास नहीं; तो उसे अपने
कथन की पुष्टि में उस सारे देश का
अवगाहन करना आवश्यक होगा।
इसी प्रकार परमात्मा की सिद्धि इस
विस्तृत भूमण्डल में छोटे से कीड़े तथा
पत्ते की अद्भुत रचना को देखकर भी
की जा सकती है; किन्तु इस साक्षी के
होते हुए भी यह कहना कि इसमें परमात्मा
का हाथ नहीं अवश्यमेव कहने वाले की
धृष्टता तथा अहंमन्यता का प्रकार
होगा। अतएव जब तक वह इस
फैली हुई प्रकृति के ओर २ का ज्ञान
कर अपने को त्रिकालदर्शी या सर्व-
व्यापक न बनाले तब तक उसका
वचन कभी भी प्रामाणिक नहीं
हो सकता।

इस उपर्युक्त नास्तिकता के विरुद्ध
कोई युक्ति को महाशय होलीओक
ने आस्तिकों के ही मत्थे मढ़ने का
निष्फल प्रयत्न किया है। उसका
कहना है कि परमात्मा की एकता,
सत्ता तथा उसे सारे संसार का आदि-
कारण सिद्ध करने के लिये मनुष्य में
सर्वज्ञता तथा सर्वव्यापकता के
गुणों का होना नितान्त आवश्यक
है। जब तक कोई मनुष्य सर्वज्ञ तथा
सर्वव्यापक नहीं बन जाता तब तक
वह कैसे कह सकता है कि इस
दुनिया के विस्तृत काल और देश में
परमात्मा के अतिरिक्त नियम तथा
क्रम की व्यवस्था का कोई आधार
नहीं। हो सकता है कि किसी काल तथा
देश में इस बात पर विश्वास करने
के लिये काफी प्रमाण हों कि प्रकृति
ही स्वयं अपना आदिकारण है।
इस प्रकार यद्यपि महाशय होलीओक
ने अपने विरोधी की युक्ति से ही
उसका मुंह बन्द करने का प्रयत्न
किया है; तथापि वे इसमें सफल
नहीं हो सके। उनके कथन में सम्भावना
पर ही ज़ोर दिया गया है कोई निश्चित
परिणाम नहीं निकाला गया। अपूर्णज्ञ
अर्थात् थोड़ी से थोड़ी बुद्धि रखने
रखने वालों भी आस्तिक प्रकृति के

दृष्टि से जगत में रचना की कौशलता को
देख कर परमात्मा की ओर विश्वास-
पूर्वक निर्देश कर सकता है; नास्तिक
अपनी शक्ति भर गवेषणा के बाद भी
जड़ प्रकृति से भिन्न, शुभ तथा विवेक
को सत्ता का अतिरिक्त सिद्ध नहीं
कर सकता। हां यदि आस्तिकों की
ओर से प्रकृति की सत्ता का ही
निषेध किया जाता अर्थात् इस कार्य-
जगत के प्रति बिल्कुल आस्था न मान-
जाता तो अवश्यमेव ही नास्तिक का
इस प्रकार सन्देह करना उचित होता।
क्योंकि उस अवस्था में 'परमात्मा
नहीं है' तथा 'प्रकृति नहीं है' ये दोनों
ही स्थापनाएं समान कोटि की होतीं।
परन्तु सौभाग्यवश कोई भी ऐसा
आस्तिक नहीं जो कि प्रकृति की सत्ता
या इसके कारणत्व को बिल्कुल ही
अस्वीकार करता हो।

उपर्युक्त युक्तियां - जिन्हें कि महाशय
फ्लिंटर तथा चालमर्स ने अधिक
दृढ़ आधारों पर खड़ा किया है—
के अनुसार नास्तिकों को परमात्मा
का निषेध करते समय सन्देह की अवस्था
में ही रहना चाहिये। अपनी अज्ञान
तथा परिमितता का ध्यान रखते
हुए उनका कोई अधिकार नहीं कि
वे निश्चित तौर पर 'परमात्मा नहीं है'
ऐसी स्थापना कर सकें। उनका विचार
हमेशा ही इस प्रकार सन्देहात्मक होना
चाहिये कि 'पता नहीं कोई परमात्मा
है या नहीं'। परन्तु प्रायः नास्तिक
अपनी उचित सन्देहावस्था में नहीं
रहते। वे अनजाने ही अपने अधिकार
से बाहिर होकर 'परमात्मा नहीं
है' ऐसी निश्चित व्यवस्था दे देते हैं।
वास्तव में उनके लिये यह है भी
बिल्कुल स्वाभाविक। मनुष्य की
अपनी प्रकृति या आत्मा संदेह में
नहीं रहना चाहती। वह जल्दी से
जल्दी किसी निश्चित परिणाम पर
पहुंचना चाहती है और हमेशा
इस ओर इशारा भी किया करती है।
किन्तु नास्तिक प्रायः मार्ग से च्युत
होकर अन्धविश्वासियों के समान
विपरीत मार्ग पर चले आते हैं।

(अपूर्ण)

आह्वान

चलो चलें वह कौन बुलाता जगती के उस पार

हैं नक्षत्र नहीं, ये लोचन

बुला रहे मुझको क्या निर्निमिष

नीलाञ्चल पर उत्सुक बैठा करने कौन विहार। चलो०

बिजली बन बादल में आता

गर्जन का मृदु राग सुनाता

बरसाता अम्बर से मुझ पर अमृतमयी जलधार। चलो०

स्वर्णकलश से कौन महीतल

दुग्ध-सुधा-सिञ्चित कर शीतल

अम्बर की थाली भर मोती देता क्यों उपहार। चलो०

वृद्ध हुआ, अब कौन सहारा

वत्स! एक तू ही अति प्यारा

कर फैलाये बुला रहा यों शीत किरण शतवार। चलो०

कुसुमाकर का रूप बनाकर

फूल सुँघाता अञ्जलि भर भर

पल्लव की अंगुली से करता इङ्गित बारम्बार। चलो०

आ जाऊँ, पर है जग जाली

पकड़े है माया मतवाली

मुझसे भी न गहा यह कर लो - ढूँढूँगा मैं भव पार। चलो०

हृदयों का यह जाल बिछा है

मन मोती इन में रमता है

हृदय जुड़े यदि कोई जोड़े तब होई पतवार।

'शिवहंस,'

राही

इस अनन्त पथ के हे यात्री! सांझ हो गई, ठहर यहीं
रात अंधेरी, पथ दुर्गम है, यहीं ठहर जा, जा न कहीं॥

ऊपर देख, घटायें काली घिरी हुई हैं चारों ओर
रह रह बिजली चमक रही है, बर्षा होने भी घनघोर
अंधकार इतना छाया है, कहीं पथ का पता नहीं
इस बेला में कहां जायगा? अति पास आ, ठहर यहीं॥

इस पथ का तो अन्त न होगा, देख अवस्था को अपनी
फटे वसन हैं, पका बदन है, बैठ गई हैं आंखें भी (छ)
कब तक और चलेगा भाई एक रात विश्राम सही,
मेरे सूने घर में आजा, इसे बसा जा, ठहर यहीं॥

"श्री राही,,

एक ढंग के स्वभाव वालों यथारीति वि-
धान पर आश्रित रहकर तत्कालीन
परिस्थितियों के मातहत शासकों की
उसको ज़रूरत नहीं है। उसको उसकी
दशा के अनुकूल ही शासक मिलना
चाहिये। यदि पुरुषों में वीरता, सा-
हस तथा धैर्य अधिक है तो स्त्रियों
में शान्ति, कोमलता, प्रीति तथा स-
रलता अधिक है। युद्ध के समय मैदा-
न के लिए पुरुष हो और शान्ति के
समय शांत और प्रेममय राष्ट्र की शा-
सिका स्त्री हो तो इस प्रकार राष्ट्र की र-
क्षा बहुत उत्तम प्रकार से चल सकती
है। मतलब यह है कि प्रति विधि वि-
धान का क्षेत्र जितना विस्तृत किया
जावे उतना ही अच्छा है। यदि पुरुषों
में समाजानुकूल दशा के अनुसार
शासक पुरुष न मिलता हो तो स्त्रि-
यों में से ही योग्य चुनाव किया जावे
अगर उस समय इस बात की उपेक्षा
की और स्त्रियों को घृणा की दृष्टि से
देखा गया तो निश्चय ही राष्ट्र का ह्रास
शीघ्र होवेगा और अन्त में स्त्रियों को
इसका अधिकार देना ही पड़ेगा।
राष्ट्र को तो उत्तम शासक चाहिये चा-
हे वह स्त्री हो या पुरुष, इससे राष्ट्र को
कुछ भी मतलब नहीं होना चाहि-
ये।

(ख) स्त्रियों का जीवन पारिवारिक है
जीवन है। स्त्री तथा बच्चा का मिलके
अनुकूल जोड़ देना स्वाभाविक तथा
न्याययुक्त है। इस प्रकार मिल कर
परिवार एक निश्चित रूप में राष्ट्र
का धारण करेगा। यह बहुत ही आ-
वश्यक है क्योंकि पूर्व में राष्ट्र का
मूलाधार परिवार ही था। अकेले
तथा समूह राष्ट्र में शान्ति के साथ
परिवार की मुख्यता का बदला शा-
न्ति बल के अनुसार उचित ही है।
जो पुरुष में था उसका नहीं बरताव-

स्था में उत्पन्न हो तो इससे बढ़कर और अच्छा क्या हो सकता है।

(3.) आजकल यूरोपीय राष्ट्रों में स्त्रियें अप्रत्यक्ष तौर पर राजनीति में भाग लेती हैं। पुरुषों पर स्त्रियों का कितना अधिक प्रभाव होता है यह किसी से भी छिपा नहीं। राजनीतिज्ञों का कथन है कि अप्रत्यक्ष हाथ की अपेक्षा प्रत्यक्ष हाथ का होना आवश्यक है नहीं तो अप्रत्यक्ष हाथ भी आड़ में राष्ट्र में भयंकर परिणाम उत्पन्न कर सकते हैं। स्त्रियां पुरुषों जैसे राष्ट्र की कल पुर्जा बनें इससे अधिक राष्ट्र के लिये और क्या हानि कर हो सकता है। अच्छा तो यही है कि स्त्रियों को जितना जल्दी अधिकार दे दिया जावे और वह अपना उत्तरदायित्व समझती हुई खुले तौर पर राष्ट्रीय कार्यों में भाग लें और उत्तमता से भी चलावें।

(ब) स्त्रियों को शासन का अधिकार था यह भारत के अतीव प्राचीन इतिहास से स्पष्ट तौर पर प्रगट होता है। जब रामचन्द्र जी महाराज पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करके वन में तपस्या के लिये 14 वर्ष का वनवास लेने लगे तब सब महर्षियों के गुरु तपस्वीनिष्ठ नरपुंगव वसिष्ठ जी ने कहा था कि-

"अनुष्ठास्यति रामस्य सीता प्रकृतमासनम्। आत्मेयमिति रामस्य पालयिष्यति मेदिनीम्॥" ३६ सर्ग॥

अर्थात् रामचन्द्र जी के बाद सिंहासन पर बैठने का अधिकार सीता जी का है वे ही सिंहासन पर बैठकर अब पृथ्वी पर शासन करेंगी।

इसी प्रकार महाभारत के समय भी जब महाराज युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ से पहिले समस्त देशों का विजय कर लेते हैं तब व्यास भगवान् उनसे कहते हैं कि हे युधिष्ठिर!

सुनसान गुरुकुल.

घुमड़ि घुमड़ि घन घोर घटा घिरि आई गरज गरज जन मन अकुलाई है।
चम चम चमक चपल चपला ने हाहा चहुं ओर प्राणिन की चख चुंधियाई है।
सां सां कर वायु चलै तीर सों भी तेज जिमि पापिन के हृदय को बेधवे सिधाई है,
दृश्य अति भयकर चहुं दिसि दीखत है गगन पै चढ़ मानो इन्द्र सेना आई है॥१॥
दीखत कहूं नाहि सूरज गगन माहि डर कर मानो तेहि सूरत छिपाई है,
तारे हैं न तारापति रात तारा पथ माहि रात दिन बदरन अंधेर मचाई है।
विपद न एक हटी अबलौं भी ऊपर से झट पट दूसरी भी मुंह बाये आई है,
घटा था पाखण्ड न घटा क्षण पल भर भी हा, देखते ही देखते जहं बाढ़ चढ़ आई है॥२॥
बड़े २ मन्दिर, प्रसाद, राजगृह सब खान की सामग्री देव! तूने हा नसाई है,
क्या अचर और चर देखा कुछ भी न तूने चीज आई सामने जो पल में मिटाई है।
रहने को थी झोपड़ियां वह भी न तूने देखीं, कृषकों की खेती भी हा तूने ही बहाई है,
निबलों पै अत्याचार करते नहीं है बली पर तूने उन पै भी शक्ति आजमाई है॥३॥
कोई घर हीन है, वस्त्र विहीन है, सब भांति दीन है शिशु करुण पुकार देती कहीं पै सुनाई है,
कोउ वृक्ष पै खड़ा है, कोउ पानी में पड़ा है देती चहुं ओर हाहाकार ही सुनाई है।
व्याकुल हैं पशु सब मनुज अचर चर रक्षा हेतु त्राहि त्राहि सब ने मचाई है,
पानी ही है पानी चहुं ओर, नहीं ठौर कोई प्रलय की रात काली आज ही मानो आई है॥४॥
दूरी बनवासियों की पुरी भी न हना जो तो भी तूने निज उस रोष में जलाई है,
कच्चे कच्चे घर थे और पर्ण की कुटीर थीं वे, दुष्ट देव! वे भी तूने सब विनसाई हैं।
गाय आदि पशु हर, कंद मूल फल हर, कह भला कीर्ति कौन आज तूने पाई है?
कानन की सुषमा पै रहते थे सदा जो मुग्ध दीन-दया वह भी न लाज तुझे आई है॥५॥

X X X

सुनसान गुरुकुल

आई विपद पै विपद बनिरी पर दिल में निठुर दया न तेरे तनिक भी आई है,
रोष तेरा इतने पै भी न हाय शान्त हुआ, बची खुची चीज को भी आग लगाई है,
जतन से जोर जोरि जो भी जमा कर पाये, पापी मति तेरी उस पै भी ललचाई है,
कौन जाने क्रूर गति तेरी किन विधना के, कह तो रे क्या २ तेरे मन में समाई है ॥६॥

卐 卐 卐

इस पर भी न तेरा निठुर पसीजा हिय वज्र से भी कठिन हा तुव निठुराई है,
हार गये हाय हम यत्न कर बार बार, पाया नहीं पार तुव कैसी चतुराई है।
जल अग्नि कोप से बचा था जो भी कुछ - तूने, उड़ा आंधी से उसे दयालुता दिखाई है,
तोड़ डाला सब कुछ बाग में लगा था जो भी, आज मेरे तेरी मति कैसी शठताई है ॥७॥

卐 卐 卐

अब भी न शान्त वायुमण्डल हुआ है सारा धूल ही हा धूल चहुं दिशि में छाई है,
जल अग्नि और वायु भूत का प्रकोप देख जिमि भूमि तल के भी दिल उठ आई है।
देती न दिखाई हरियाली मही मांहि अब रेत ही हा रेत चहुं ओर बिछि गई है,
दूर कर मानो हरी हरी मखमल साड़ी, विधवा ने कफन की चादर उढ़ाई है ॥८॥

卐 卐 卐

औषध भंडार, खादी गृह, यन्त्रागार, क्रीड़ा क्षेत्र आदि की भी हा हा पूरी ही सफाई है,
कला भवन, रत्नागार, रसद भंडार और पंचकुटी की भी सब दशा विनसाई है।
बटुक आवास नहीं, गुरुजन वास नहीं, परिवार हर हमी हन्त! आज धरा शाई है,
खण्डा नहीं, तारे नहीं, महात्मा गांधी द्वार (गेट) नहीं, जिन ईंटों की पांती आज मिट्टी में समाई है ॥९॥

卐 卐 卐

उजड़ गई २ टूटे फूटे भवन बचे हैं जहं तहं - देखा, कौलिज के आभाव का नाम ही सुनाई है,
उजड़ गई सारी यह फूल भरी फुलवारी, पत्ती २ रस की भी आज धुर साई है।
कोयल की कूक नहीं, भ्रमर गुञ्जार नहीं, कौवों की ही कां कां देती कान में सुनाई है,
लगत मसान और मरघट समान यह सारा सुनसान 'कुल' देता दिखलाई है ॥१०॥

Classification of sciences
वा
विज्ञानों का विभागीकरण.

पूर्व इसके कि विज्ञान के विषय में कुछ लिखा जाय. विज्ञान की परीक्षा का करना आवश्यक है। संक्षेप से यह कह सकते हैं कि संशोधित ज्ञान (correct knowledge) का नाम ही विज्ञान है। जिस का उद्देश्य क्रमबद्ध शुद्ध सिद्धान्तों को बतलाना मात्र है। किसी विषय का मामूली ज्ञान होना विज्ञान में शामिल नहीं, और नाहीं सन्देहात्मक ज्ञान का नाम विज्ञान है जैसे ग्राम का प्रत्येक मनुष्य (Insect) कृमियों के विषय में कुछ न कुछ जानता है, परन्तु, जब तक वह इस विषय में क्रमबद्ध (systematically) ज्ञान प्राप्त नहीं करता तब तक (entomologist) कभी नहीं कहला सकता। इसी प्रकार यद्यपि प्रत्येक मनुष्य बहुत से पदार्थों के विषय में पर्याप्त ज्ञान रखता है, परन्तु वह वैज्ञानिक नहीं कहला सकता। अतः systematic correct knowledge ही विज्ञान कहला सकती है। ज्ञान (जानने मात्र) का नाम ही विज्ञान है, यदि उसे कार्य रूप में परिणत किया जाय तो वह भी विज्ञान में शामिल नहीं। किसी ज्ञान को जब कार्यरूप में लाया जाता है, वा उसके अनुसार क्रिया की जाती है तो वह करना (Art) शिल्पकला के नाम से पुकारा जाता है। यद्यपि art और science का साधारणतया सम्बन्ध प्रतीत होता, और ठीक भी है क्योंकि बहुत सी sciences, arts की आधारभूत हैं। कई sciences में indirect तौर पर art भी सम्मिलित है। परन्तु, तो भी इन की एकता सिद्ध नहीं। इस प्रकार विज्ञान के स्वरूप पर दृष्टि डालते हुए अब अपने विषय की ओर भी झुकते हैं।

सब विज्ञान इस ब्रह्माण्ड (universe) के भिन्न भिन्न भागों पर प्रकाश डालते हैं, और भिन्न भिन्न दृष्टियों से

विज्ञानों का विभागीकरण

रस(की study) पर विचार करते हैं जैसे chemistry प्राकृतिक तत्वों पर विचार करती है और गणित धरातल (space) और संख्या (numbers) के गुणों (properties) पर प्रकाश डालता है, इत्यादि। इसी प्रकार अन्य सब विज्ञान भी इस संसार के विशेष विशेष अंशों पर विचार करके तद्विषयक सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि The whole universe is the atmosphere of sciences. अर्थात् यह सारा संसार ही 'विज्ञान का वायुमण्डल' (विज्ञानमय) है। प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थ (चाहे वह जड़ हो या चेतन) हमें विज्ञान की ओर ले जाता है। सब प्राकृतिक पदार्थ या आत्मिक तत्व वैज्ञानिक चमत्कार हैं। अस्तु;

पहला सर्वसाधारण विज्ञान गणित है। इसका विषय ऊपर कह चुके हैं।

दूसरा विज्ञान (physics) भूत सम्बन्धी या भौतिक है। यह matter पर विचार करता है। तीसरा (chemistry) रसायन है, यह संश्लेषण तथा विश्लेषण द्वारा प्रकृति के तत्वों पर विचार करती है। जैसे यह जल को उद्रजन तथा अम्लजन में विभक्त करके उनके गुणों पर विचार तथा पुनः उनसे पानी बनाना इत्यादि बातों पर प्रकाश डालती है। रसायन जल की तरह एक गुलाब के फूल को भी विश्लेषण करके उसके तत्व को देख सकती है। परन्तु वह उसे पुनः नहीं बना सकती और न ही उसकी बनावट पर दृष्टि डालती है। इसके लिए एक अलग विज्ञान है जो Biology कहलाता है इसके दो भाग हैं एक Botany और दूसरा Zoology जिन्हें कृषिविद्या और प्राणिविद्या भी कहते हैं। इसी प्रकार astronomy ज्योतिष इत्यादि विज्ञान भी समझे जा सकते हैं।

उपर्युक्त सब विज्ञान तथा अन्य बहुत से इसी एक ही श्रेणी के विज्ञान हैं। ये सब प्राकृतिक पदार्थों और तत्वों को प्रतिपादन करते हैं। ये सब material sciences हैं। इस के अतिरिक्त कुछ विज्ञान आध्यात्मिक वा मानसिक हैं। उन के भेद जानने के लिए हमें मन (mind) का विश्लेषण करना चाहिए। मन के तीन भाग हैं

I ज्ञान the knowing.

II इच्छा willing.

III सुखदुःखानुभव feelling

जब मन के तीन भाग हुए तो तीनों पर विचार करने के लिए तीन विज्ञान होना तो आवश्यक है। परन्तु प्रत्येक पदार्थ वा विषय पर दो प्रकार ~~का पर दो प्रकार~~ से विचार किया जा सकता है (I) जैसा कि वह (पदार्थादि) है, (as it is) और (II) जैसा कि वह होना चाहिए (as it ought to be) उदाहरणार्थ एक छोटे बड़े बाहुओं वाली चतुर्भुज लीजिए। एक ज्यामिति का ज्ञाता गणितज्ञ उस पर और ढंग से विचार करेगा, उस के बाहुओं को नापेगा, कर्ण खैंच कर क्षेत्रफल निकालने का यत्न करेगा इत्यादि २ बातों पर ध्यान देगा परन्तु एक artist चित्रकार उस की बनावट में अशुद्धि छांटेगा और कहेगा कि यह इस तरह बनाना चाहिए था। दोनों ओर की बाहु एक समरूप होनी चाहिए तब यह अच्छा लगेगा इत्यादि। इसी प्रकार प्रत्येक पदार्थ पर दो प्रकार से विचार किया जा सकता है। एक जैसा उस का स्वरूप है, दूसरे जैसा होना चाहिए। इस के अनुसार मानसिक जगत् के भी तीनों अंशों पर विचार किया गया है और भिन्न २ विज्ञान बने हुए हैं। mental world मानसिक जगत् के तीनों अंशों के (वर्तमान) स्वरूप पर विचार करने वाला विज्ञान psychology है। यद्यपि sociology आदि भी पृथक् रूप से इस विषय की ओर झुकती हैं परन्तु

तथापि psychology के अन्तर्गत ही हैं। mental world के तीनों अंशों के 'as ought to be' स्वरूपों पर विचार करने को भिन्न २ sciences हैं। Knowing (as ought to be पर विचार करने के लिए Logic है, जो हमारे विचारों को शुद्ध करता है। willing (as ought to be) पर विचार करने को Ethics है जो इच्छा और क्रिया (कृति) को correct करती है। और feelling (as ought to be) पर Aesthetics विचार करती है। जो beauty का नियामक है।

इस प्रकार यह विज्ञानों का क्रम हुआ। इन को tabular form में दिखाने के लिए हम इस ब्रह्माण्ड को (जो कि विज्ञान का स्रोत है, विज्ञानमय है) एक गोला कल्पना करते हैं उस के दो समभाग किए एक mental world का द्योतक २रा material world का प्रकाशक है, प्राकृति विज्ञान सब वस्तुओं या तत्वों के वर्तमान स्वरूप पर ही विचार करते हैं। अतः एक विषय पर एक प्रकार का ही विज्ञान है। सो चित्र से स्पष्ट है ही। परन्तु मानसिक

Logic
Ethics
Aesthetics
Psychology
Knowing
willing
feeling
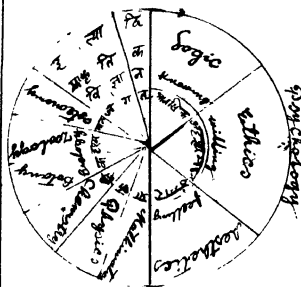
विषयों पर दोनों प्रकार का विचार है। प्रथम तीनों अंशों में से मात्र Psychology वर्तमान स्वरूपों का प्रतिपादन करती है जो बाणों द्वारा दर्शाया है। और तीनों अंशों पर (as ought to be) को बताने के लिए पृथक पृथक कोष्ठ निर्दिष्ट विज्ञानों के द्योतक हैं। इस प्रकार यह सारा जगत् विज्ञानमय है और उस का सामान्य ज्ञान उपर्युक्त विभाग किया जा सकता है।

समाप्त।

मिस्री धर्म और वेद

लेखक - ब्र. धर्मवीर

—:0:—

संसार के प्रसिद्ध धर्मों पर वैदिक धर्म का विशेष प्रभाव है; केवल प्रभाव नहीं परन्तु कुछ एक धर्मों का साक्षात् स्रोत वेद ही है अथवा दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि वे धर्म वैदिक धर्म के रूपान्तर ही हैं। पारसी, बौद्धधर्म तथा उपनिषदों के मायावाद की गणना इसी कोटि में की जा सकती है। शेष धर्म वैदिक धर्म से प्रभावित अवश्य हुए हैं यह बात आज खोजों से निर्विवाद हो चुकी है। यही बात आज मैं ने इस छोटे से निबन्ध में सिद्ध करनी थी. परन्तु स्थान के अभाव से केवल एक ही धर्म पर — जिस का नाम मिस्री धर्म है — प्रकाश डालना चाहता हूं। मैं यह सिद्ध करना चाहता हूं कि मिस्री धर्म भी उन धर्मों से है जिन पर वैदिक धर्म के उज्ज्वल सूर्य ने पर्याप्त मात्रा प्रकाश की किरण पुञ्ज डाली हैं। जब एक धर्मों के अनुशीलन करने वाला विद्यार्थी मिस्र के धार्मिक विचारों का अनुशीलन करता है तो वह भारतीय विचारों से कुछ कम समानता नहीं पाता। इस समानता को देख कर वह एकबार अवश्य ही इसी परिणाम पर पहुंचता है कि भारत और मिस्र के विचारों का परस्पर सम्बन्ध अवश्य रहा है। इन दोनों देशों के धर्मों के विकास में अवश्य भिन्नता है - परन्तु प्रारम्भ एक सा ही प्रतीत होता है। यदि हम दोनों देशों के विचार प्रवाहों के साथ २ चलते चले जांय तो निःसन्देह हम एक ही मूल स्रोत में जा पहुंचेंगे। यद्यपि विषय विस्तृत है तथापि इस विषय का दिग्दर्शन मात्र करा देने से ही हमारा अभिप्राय अवश्य सिद्ध हो जायगा ऐसा मेरा विश्वास है।

सब से प्रथम ईश्वर सम्बन्धी विचार को लेते हैं।

अत्यन्त प्राचीन काल में मिस्र के निवासी एक ईश्वर में ही विश्वास करते थे

जैसा कि इन की पुस्तकों के देखने से मालूम पड़ता है।

डा॰ Tiele का कथन है कि मिश्र में एकदेवतावाद और बहुदेवतावाद दोनों ही साथ साथ प्रचलित थे। निःसन्देह डा॰ Tiele का कथन कुछ हद तक ठीक भी है। यदि डा॰ Tiele तथा अन्य पाश्चात्य विद्वान् मिस्री धर्म पर गहरी दृष्टि से विचार करते तो उन्हें इस प्रकार के कथन का अवसर न मिलता। मिस्टर बज जो कि मिस्री धर्म के विषय में प्रामाणिक समझे जाते हैं उन का कथन है कि पाश्चात्य विद्वान् जिस समय पहले पहले मिस्री धर्म का अध्ययन प्रारम्भ करते हैं तो उन्हें वहां pure polytheism ही प्रचार दिखाई देता है परन्तु "When we examine these gods, closely, then they are found to be nothing more or less than forms, or manifestations, or phases, or attributes, of one god, that god being the Sun-god, who, it must be remembered, was the type and symbol of god. (Egyptian religion P. 13)

वास्तव में बात यही है। जैसे वेद में दोनों प्रतीत होते हैं पर वास्तव में सब का अर्थ एक ईश्वर है। यही व्याख्या मिस्री धर्म में भी लग सकती है। जहां परमात्मा के भिन्न २ गुणों का वर्णन है वहां तो लोगों ने बहुदेवतावाद समझा जहां कहा कि "इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुः ...... एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः" वहां एकदेवतावाद समझा। वास्तव में एकदेवतावाद ही वैदिक धर्म का मन्तव्य है। मिस्री धर्म में भी मि॰ बज का प्रमाण देते हुए हमने यही बात सिद्ध की है। इस विवादात्मक विषय के पश्चात् फिर हम अपने विषय को लेते हैं। परमात्मा सम्बन्धी विश्वास मिस्री धर्म में क्या है। मि॰ बज की पुस्तक को पढ़ने से पता लगता है कि मिस्रियों का परमात्मा सम्बन्धी विश्वास बहुत ही उत्कृष्ट था। धर्मों में केवल वैदिक धर्म से ही इस की तुलना ~~पासके हैं।~~ जा सकता है। मि॰ बज ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि पुराने मिश्र के लोग एक ऐसे ईश्वर में

विश्वास करते थे जो स्वयम्भू, अज, अदृश्य, नित्य, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान्, और अज्ञेय है। जो द्युलोक और पृथिवी लोक तथा पाताल का निर्माता है, जो आकाश और समुद्र, पुरुष तथा स्त्री, पशु पक्षी और मछली और सर्पणशील जन्तु, वृक्ष और वनस्पति का निर्माता है और उन सूक्ष्म प्राणियों का भी उत्पन्न करनेवाला है जो उस की इच्छा और आज्ञा का पालन करने वाले दूत हैं। (Page 14)

अब इन की समानता के नाते वैदिक मन्त्र पेश किए जा सकते हैं। उदाहरण के तौर पर हम केवल दो एक को ही दिखाते हैं "सपर्यगाच्छुक्रमकायमित्यादि मन्त्र" "धाता यथापूर्वमकल्पयत्" इति मन्त्र सूक्ष्म तुलना को दिखाते हैं। इसी प्रकार पृष्ठ १२ पर लिखा है कि वह परमात्मा (जो कामी नाम से प्रसिद्ध है) कभी पत्थरों में नहीं चित्रित किया जा सकता। वेद में भी बिल्कुल ऐसा ही कहा है — न तस्य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यशः। इसी प्रकार कहा है। God is all (पुरुष एवेदं सर्वम्) and by Him are all things & all are of his will. Without Him nothing hath been nor is, nor will be. For all things are to Him, in Him & through Him (यस्मिन् भूतानि विश्वे निषेदुरित्यादि) एको वशी सर्वभूतान्तरात्मा एकं विश्वं बहुधा यः करोतीत्यादि।

(2) अनादि तीन चीजें हैं:— पैट्री ने अपनी पुस्तक "Egyptian religious philosophy" के ५३ पृष्ठ पर लिखा है कि "But Cosmos is one, Soul is one, God is one." वेदों के निम्न मन्त्र से इस की तुलना की जा सकती है। "द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया समानं वृक्षं परिषस्वजाते" इत्यादि में तीनों आत्मा-परमात्मा तथा प्रकृति की सत्ता स्वीकार की गई है इसी प्रकार ऋ. १०।११४।४ में "एकः सुपर्णः स समुद्रमाविवेश स इदं विश्वं भुवनं विचष्टे। तं पाकेन मनसा पश्यमन्तितस्तं माता रेळ्हि स उ रेळ्हि मातरम्॥"

(३) आत्मा के अमरत्व में विश्वास:— इसी पुस्तक के ७५ पृष्ठ में निम्न लेख आता है:— They believe in the immortality of souls, which

came out of the most subtle air (सूक्ष्म वायु) are united to their bodies as in prison ..... and when they are set free ..... they mount upwards. अमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः - इस मन्त्र खण्ड का यही तात्पर्य है कि अमरणधर्मा (आत्मा) मरणधर्मा (शरीर) के साथ एक स्थानी है। इस में आत्मा को अमर्त्य बताया है।

(४) पुनर्जन्म : —

मिस्री लोग थियोसोफिस्ट लोगों की तरह Reincarnation के सिद्धान्त नहीं मानते परन्तु वैदिकधर्म के मुख्य सिद्धान्त metempsychosis (आत्मा का प्रत्येक योनि में आना जाना) को ही मानते हैं। वे कहते हैं कि आत्माओं को पाप के कारण शरीर में कैद किया जाता है। पुण्यात्माएं स्वतन्त्र विचरती हैं। बहुत पाप करने वाली पशु योनि में चली जाती हैं। पुण्यात्माएं अगले जन्म में धर्मात्मा, विद्वान्, गायक, ज्योतिषी, चिकित्सक बनती हैं। यह बात हमारे शास्त्र से इतनी मिलती है कि पैट्री को लिखना पड़ा "Here metempsychosis is fully stated, as in Plato, but it is not in the Egyptian form, and the Indian influence appears already at work. पृष्ठ ४३, ४४.

ऋग्वेद में (१.१६४.३८) में तो यह स्पष्ट ही कहा है कि "अपाङ् प्राङेति स्वधया गृभीतो ऽमर्त्यो मर्त्येना सयोनिः॥

(५) प्रकृति नाश रहित है : —

Matter can not be annihilated nor can space produce matter of itself.

वैदिक धर्म में भी प्रकृति को नाशरहित बताया गया है यथा

(६) पशु विधान : —

मिस्रियों की पुस्तकों में लिखा है कि अग्नि यह शिकायत करती है कि कहां तो मुझ में सुगन्धित पदार्थ पड़ते थे और आज माँस पड़ता है। यह कथन महाभारत के "श्रूयते हि कल्पे नृणां व्रीहिमय · पशु :" इस तथा अन्यों इसी प्रकार के वाक्यों से इतना मिलता है कि पैट्री को स्वीकार करना पड़ा कि ये निश्चित तौर पर भारतीय भाव हैं। ये हमने दिग्दर्शन मात्र कराने के लिए प्रयत्न किया है।

हृदय

इस असीम सिन्धु को देखो; इस के छोर का कहीं पता नहीं। यह अनन्त विस्तार वाला और गम्भीर है। इस की छाती पर हजारों तूफ़ान बड़े भयङ्कर और घमासान दङ्गल खेलते हैं परन्तु फिर भी इस की शान्त स्थिति में कुछ फ़रक नहीं पड़ता। अहङ्कारभावपूर्ण हजारों [illegible] नदियां इस में पड़ कर निज अहङ्कार छोड़ देती हैं तथा मिल कर एक [illegible] जाती है। यह सिन्धु अद्वैत है - सारी नदियां अपने द्वैतभाव को छोड़ इस में एक हो जाती हैं। सिन्धु इनका परम स्थान है। यह अनन्त प्राणियों का जीवनदाता और आश्रयस्थान है। सम्पूर्ण [illegible] रेक विभव इस में सुरक्षित हैं।

· + · + · + · + · + · + ·

ओह! यह निर्दय हृदय शून्य सिन्धु सैंकड़ों नहीं अपि तु हज़ारों जन धन पूर्ण पोतों को अपने विशाल उदर की भेंट करता है। लाखों छोटे मोटे प्राणी इस की शरण में आ कर भी प्रतिक्षण अपने से बड़े और बलवान जन्तुओं का ग्रास बन रहे हैं। शरणागत की रक्षा न करना कितना असह्य पाप है। यह सिन्धु कितना कुटिल है - क्या कहीं इस की कुटिलता की भी कहीं सीमा है? निस्सन्देह; जिस तरह इस का परिमाण असीम है उसी तरह इस की कुटिलता भी असीम है। यही कारण है कि यह सदैव असंख्येय तूफ़ानों से इतना अधिक विक्षुब्ध रहता है। ऐसी अवस्था में यह स्वाभाविक ही है कि यह शान्त [illegible] आनन्द पूर्ण पूर्णचन्द्र के शीतल चरणों को ज्वार के बहाने से छूने के लिये [illegible] लालायित हो।

· + · + · + · + · + · + · + ·

पर मेरा हृदय सिन्धु इस सिन्धु से कहीं विशाल है। यह नील-सिन्धु मेरे हृदय-सिन्धु की अन्य महान कृतियों के सामने एक छोटी सी कृति के समान है। आंख बन्द करने से कुछ नहीं दीखता, आंख खोलते ही छोटी से छोटी तथा महान से महान वस्तु भी [illegible] रूप में दीखने लगती है। बस, बाह्य चक्षु बन्द कर अन्दर की दृष्टि खोलो - तब गगनचुम्बी तथा चट्टानों को भी दो टूक कर देने वाली विक्षिप्त भावना [illegible] लहरों से अत्यन्त विक्षुब्ध हृदय सिन्धु की विशालता, भीषणता तथा गम्भीरता का सम्यक् परिज्ञान हो जायगा

· + · + · + · + · + · + ·

मैं तभी धन्य हूं जब मेरा यह अशान्त और विक्षुब्ध हृदय-सिन्धु शीतल चन्द्र के समान शान्त और आनन्द स्वरूप योगी के चरणों के लिए लालायित हो शान्ति लाभ करे।

·+·+·+·+·+·+·+·

ऐ क्षुद्र मनुष्य! तू इस मेरे हृदय-सिन्धु को खारा समझ कर इसे टेढ़ी निगाह से मत देख। खारा होते हुए भी यह अमूल्य प्रेम-भक्ति आदि अमूल्य और अत्युत्कृष्ट रत्नों ~~से~~ भरा पड़ा है। ऐ नीच पुरुष! तू ने खारे पानी से क्या करना है – इस के रत्नों से अपनी झोली भर कर धनी क्यों नहीं हो जाता!

जिज्ञासुः

लीन

यह चीर तथा कृष्ण रात्री चन्द्र और इन अनगिनत तारों को साथ ले सफ़ेद दिन में लीन हो रही है।

—:ΛVΛVΛVΛVΛV:—

यह चमकीला दिन दिनकर तथा दिनकर से प्रकाशमान इस इस प्रपञ्च को साथ ले काली रात में लीन हो रहा है।

—:ΛVΛVΛVΛV:—

ये सब वेगवती नदियां अपने साथ जल की आश्चर्यजनक अनन्त ~~जल की~~ राशी को ले अनन्त समुद्र में जा कर लीन हो जाती हैं।

—:ΛVΛVΛVΛVΛV:—

प्रत्येक कार्य अपने कारण में लीन हो रहा है तथा प्रत्येक कारक अपने कार्य में लीन हो रहा है।

—:ΛVΛVΛVΛV:—

कहो वह कौन वस्तु है जिस में यह सब कुछ लीन हो जाता है?

अमङ्गणनम्

१ गुरुकुल में, आज कल, कविता का अत्यन्ताभाव सा दीख रहा है। शायद कविता की बीवेरें भी १९२४ सन् वाली भीषण बाढ़ ने गिरा दी है।

- - - - - -

२. संस्कृतसाहित्य की पावन साया भी, अब, गुरुकुल में दीखनी असम्भव सी जान पड़ती है। हाय! निर्दय बाढ़ ने इस गरीब पर भी अपना हाथ साफ़ करने से तनिक भी संकोच नहीं किया।

- - - - - - - - - -

३. पत्र पत्रिकाओं में, आजकल जीवन नहीं रहा। उन में उत्साह की निराली छटा का अब सर्वथा अभाव है। शायद पत्र-पत्रिका रूपी सुकोमल तथा नन्हे २ पौधों के लिये - आजकल शरद् ऋतु का आगमन हो गया है - क्योंकि अत्यन्त शीत से ये पत्र सूख से गये हैं। देखें, फिर कब हरियावल आती है।

- - - - - - - - - -

४. आज कल छोटी मोटी वाद-विवाद सभाओं की वृद्धि वर्षा ऋतु में उत्पन्न गजाइयों के ढेर के समान दिनों दिन बढ़ती ही चली जा रही है। ग्रीष्म ऋतु में इतनी अधिक वृद्धि का होना, निस्सन्देह आश्चर्यजनक है।

- - - - - - - - -

५. संस्कृत की "देवगोष्ठी" नामक नामी पत्रिका, जादूगर के ताश की तरह आकार में क्रमशः छोटी ही छोटी होती चली जा रही है। डर है कि कहीं, अन्त में, वह छोटी होते २ अदृश्य ही न हो जाय। ईश्वर इस की रक्षा करें।

- - - - - - - - -

६. महाविद्यालयीय "संस्कृतोत्साहिनी" ने इस बार के संस्कृत-कवितासम्मेलन में सादगी का आदर्श स्थापित कर दिया है। यह पहला ही मौका है जब कि गुरुकुल के असली सादगी के आदर्श को पूर्ण करने का भरसक क्रियात्मिक प्रयत्न किया गया है। "अयि ...."

[signature]

संसार के महान् पुरुष

एक इङ्गलैण्ड के प्रतिष्ठित सम्पादक, महाशय G. H. Welse के जो कि वर्तमान युग के सब से बड़े [illegible] सिकों में माने जाते हैं, के पास गये तथा उन से संसार के भूत-भविष्य व वर्तमान के सब से बड़े छः आदमियों के नाम बतलाने की प्रार्थना की। सम्पादक महाशय के पूछने पर उन्हों ने निम्न लिखित छः व्यक्ति गिनाए। इन छः में भी सब से पहला नाम उन्हों ने Christ का लिया। वे नाम, मे क्रमशः इस [illegible] से हैं :—

१. ईसा
२. भगवान बुद्ध
३. अशोक
४. बेकन
५. लिङ्कन
६. लूथर

जिस समय महाशय G. H. Welse ने ईसा और बुद्ध इन दो धर्म संस्थापकों का नाम लिया तो सम्पादक महोदय ने, [illegible] स्वाभाविक ही था, कि यह शङ्का करें कि "क्या धर्मसंस्थापक ही दुनियां में सब से बड़े होते हैं, इस तरह तो हज़रत मुहम्मद भी आप की दृष्टि में इन छः बड़े आदमियों में से एक हैं"। यह सुन कर G. H. Welse ने मुहम्मद के विरुद्ध बीसियों बातें कर उठाई और कहा कि मुहम्मद में मेरी तनिक भी श्रद्धा नहीं है। मैं ने बहुत चाहा कि किसी तरह मुहम्मद में मेरी श्रद्धा उत्पन्न हो परन्तु मेरा मन श्रद्धा करने से हर बार revolt करता है।

उस के आगे महाशय G.H.W. ने भारतवर्ष के सम्राट् अशोक का नाम लिया। इस पर भी सम्पादक महोदय ने पूर्ववत प्रश्न किया कि "क्या x बड़े २ विजेता बड़े आदमियों में शुमार हैं?" इस पर उन्हों ने कहा नहीं; मैं नैपोलियन को बड़े आदमियों में शुमार नहीं करता। सम्पादक महोदय ने अशोक का नाम तक भी नहीं सुना हुआ था — इस लिये उन्हों ने बड़ा आश्चर्य प्रकट किया। इस पर पं. H.W. ने अशोक का गुणगान कर उन्हें सन्तुष्ट किया।

देखें हमारे आर्यसमाजी भाई अपने कार्यों से महर्षि का कौन सा स्थान (पद) निश्चित करते हैं।

शुद्धि:

हिन्दू संगठन पर बहुत आक्षेप होते हैं। एक ओर तो हमारे कई हिन्दु भाई भी इसका विरोध करते हैं। दूसरी ओर मुसलमान तो स्वाभाविक तया इस के विरुद्ध हैं ही, क्यों कि वे तो अपना भला ही इसमें समझते हैं कि हम जिस तरह भी हो हिन्दुओं को अर्थात् काफिरों को नष्ट कर अपने धर्म का प्रचार करें। जहाँ तक हम इन को अपने धर्म में ला सकें, ले आवें और जो हमारे धर्म को स्वीकार न करें उनका नाश कर दें। इस लिए पहले से ही उन्हों ने हिन्दुओं को मुसलमान बनाना प्रारम्भ कर रक्खा है। इस लिए हम स्पष्ट देख रहे हैं कि हमारी जाति का कितना ह्रास हो चुका है। अभी कुछ सालों में हमारी संख्या ३ लाख कम हो चुकी है। उधर मुसलमानों की तथा ईसाइयों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ रही है। हम शुद्ध नहीं करते इस लिए ईसाई तथा मुसलमान हमारी मूर्खता [illegible] उठा रहे हैं। कूओं में मांस डाल कर अपनी संख्या बढ़ा रहे हैं। हमारी [illegible] इस समय एक भण्डार की तरह है जिस में से धन तो सदा निकलता रहता है पर जिस में एक कौड़ी भी नहीं आती। जैसे वह भण्डार एक समय बिलकुल खाली हो जाता है उसी प्रकार मुझे डर है शायद हमारी भी यह जाति जो [illegible] से अपने सब कुछ सभ्यता संस्कृति आदि के [illegible] होने के साथ मुसलमान राजाओं के [illegible] हुए निदारुण अत्याचारों के बाद भी अपना [illegible] अब भी बनाये हुई है वह कहीं अन्य जातियों में समा कर नष्ट न हो जाय। मौलाना हसन निजामी कहते हैं कि मुसलमान ५० लाख हिन्दुओं को अपना लेंगे क्योंकि आर्यों में जज्ब करने की शक्ति नहीं है। क्या अब भी आप को हिन्दू संगठन के लिए आवश्यक शुद्धि के [illegible] षय में सन्देह है? मेरी तो सम्मति [illegible] कि जो हिन्दू जाति के रक्षक हैं, उसकी उन्नति की आकांक्षा रखते हैं, अपने हिन्दुत्व पर अभिमान करते हैं। उन को शुद्धि का विरोध छोड़ कर जाति की रक्षा के लिए अग्रेसर

होना चाहिए। शुद्धि ही हिन्दू संगठन का एक मात्र उपाय है। इस के बिना हमारी हिन्दू जाति एक समय नष्टप्राय हो जायगी। केवल मुसलमान भी तो नहीं परन्तु कांग्रेस वाले भी तो इस का विरोध करने में कसर नहीं छोड़ते। उनका मत यह है कि शुद्धि से हिन्दू मुस्लिम एकता - जो कि स्वराज्य प्राप्ति का एक साधन है - के विरुद्ध ही काम होता दिखाई देता है। पर मेरी तो सम्मति यह है कि हिन्दू मुस्लिम एकता हो ही तब सकती है जब कि दोनों बल में समान हों। जब तक दोनों बल में समान नहीं तब तक एकता असम्भव है। किसी कवि ने भी जैसे कहा है " समान शील व्यसनेषु सख्यम् " मुसलमानों को क्या गर्ज़ कि वह हिन्दुओं से एकता करते फिरें जो बलहीन हैं उन्हीं को ही मैत्री की आवश्यकता होती है जैसे किसी कवि ने कहा है " भवति हि मोमानुसरता न दन्तिनः "। गांधी जी के इन शब्दों से स्पष्ट है कि हिन्दु बलहीन हैं तथा यवन बलशाली हैं कि "Hindus are cowards and Muslims are bullies" अर्थात् हिन्दु कायर हैं। कई कहा करते हैं कि हिन्दुओं का संगठन हो ही नहीं सकता, इन को प्रगतिशील बनाना असम्भव है परन्तु मैं यह कहता हूं कि जब ईसाइयों के रोमन कैथोलिक, प्रा. स्टेन्ट आदि भिन्न २ धर्म वाले एक हो सकते हैं और मुसलमानों के शिया सुन्नी आदि सम्प्रदाय वाले एक हो सकते हैं तो क्या एक धर्म और एक संस्कृति वाले हिन्दु अपनी जाति की रक्षा के लिए एक नहीं हो सकते ! हो सकते हैं और अवश्य ही हो सकते हैं। जब बारम्बार मुसलमानों से सताये जायेंगे तब स्वयं मिल जायेंगे और तब हिन्दु संगठन पूरा हो जायगा। यदि अभी तक हम ने ~~[illegible]~~ अपनी उन्नति नहीं की तो समयान्तर में स्वयं हम चेतेंगे और फिर हम इसी बात पर आयेंगे मेरा तो यही निश्चय है। कई स्थानों पर सारा धन हिन्दू कमाते हैं पर उसको भोगने वाले मुसलमान होते हैं। इस से स्पष्ट है कि हम गुलाम हो चुके हैं।

हमें शुद्धि द्वारा उनके का उपाय करना चाहिए। कई कह दिया करते हैं कि पहले शुद्धि नहीं होती थी और हिन्दू संगठन नहीं था। पहले मैं हिन्दू संगठन के विषय में कहूंगा कि यदि पहले हिन्दू संगठन नहीं था तो चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य अशोक जैसे चक्रवर्ती राजा हुए। यदि हम वेद पर ही दृष्टि डालें तो हमें स्पष्ट पता लग सकता कि पहले जमाने में शुद्धि होती थी। यह पाश्चात्यों के कथनानुसार बहुत पहले बने ऋग्वेद के ९वें मण्डल के ६३ सूक्त ५वें मन्त्र "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" इस से स्पष्ट है। महाभारत को ही लीजिए जिस में स्पष्ट तौर पर लिखा है "गणिका-गर्भसम्भूतो वशिष्ठश्च महामुनिः। तपसा ब्राह्मणो जातः संस्कारस्तत्र कारणम्" वसिष्ठ जी का गोत्र अब ब्राह्मणों में पवित्र माना जाता है इस से स्पष्ट है कि उन की शुद्धि हुई होगी। पाराशर तथा व्यास जी को लीजिए उन के विषय में भी एक श्लोक है --

"जातो व्यासस्तु कैवर्त्याः श्वपाक्यास्तु पराशरः। बहवोऽन्येऽपि विपुलं प्राप्ता ये पूर्वमद्विजाः" व्यास जी का जन्म मल्लाह की पुत्री योजनगन्धा से होना स्पष्ट है। वे भी शुद्ध किये गये होंगे यह भी शुद्धि के लिए प्रमाण है। जो पण्डे प्रायः विरोध किया करते हैं उन के सम्मत पुराणों को ही देखिए। भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व खंड ३४ अध्याय २१ में लिखा है "सरस्वत्याज्ञया कण्वो मिश्रदेशमुपाययौ। म्लेच्छान् संस्कृतमाभाष्य तदा दश सहस्रकान्। सपत्नीकांश्च तान् म्लेच्छान् शूद्रवर्णाय चाकरोत्।" इत्यादि से शुद्धि स्पष्ट है। इसी पुराण में आगे "मिश्रदेशोद्भवाः म्लेच्छाः काश्यपेन सुशासिताः, संस्कृता शूद्रवर्णेन ब्रह्मवर्णमुपागताः, शिखा सूत्रं समाधाय पठित्वा वेदमुत्तमम्" इत्यादि से शुद्धि स्पष्ट ही है। देवल मुनि के धर्मशास्त्र में भी इसी प्रकार "बलाद्दासीकृतो म्लेच्छैश्चाण्डालाद्यैश्च दस्युभिः, अशुभं कारितं कर्म गवादिप्राणिहिंसनम्

उच्छिष्टं भाजनं चैव तथा तस्यैव भक्षणम्।

इत्यादि श्लोकों के अन्त में इन अति घोर तथा मन में से सदाचारिक भावों का एक दम लोप कर देने वाले पापों का प्रायश्चित्त बताया है। इतिहास पर यदि नज़र डाली जाय तो पता लगता है कि यहाँ विदेशों से कई हूण आदि जातियाँ आईं तथा समय समय पर सिकन्दर जैसे आक्रान्ताओं के साथ भी कई मनुष्य आये जो सिन्ध में रहा करते थे और [illegible] कहाते थे। वे मनुष्य और जातियाँ यहाँ की सभ्यता में घुल मिल गईं और अब उनका पता भी नहीं चलता। इस से भी पुराने समय में शुद्धि का होना पता लगता है। सम्राट अशोक का बौद्ध धर्म ग्रहण इस बात का ज्वलन्त प्रमाण है। काबुल का राजा मिनान्डर यवन भी शुद्ध किया गया था जैसा कि शिला लेखों से पता लगा है कि वह बौद्ध बना। इसी लिए उसके सिक्कों के एक ओर धर्म चक्र पाया जाता है। वायु पुराण तथा मत्स्य पुराण से पता लगता है कि बुद्ध भगवान के उपदेश को न समझ कर दस करोड़ मनुष्यों ने वैदिक सभ्यता छोड़ दी इसके बाद स्वामी शंकर ने अग्नि वंशज क्षत्रियों की सहायता से शंख ध्वनि कर शुद्ध कर उन को आर्य बनाया। इसी प्रकार ब्रह्म पुराण में भी "वृत्ते स्थिते च शूद्रोऽपि ब्राह्मणत्वञ्च गच्छति" आदि श्लोकों से इस विषयक ध्वनि निकलती है॥ महाराष्ट्र देश को स्वतन्त्र करने वाले शिवाजी ने रामदास की आज्ञा से मुसलमानों को हिन्दु बना कर मराठों में मिलाया था। बाजीराव निम्बालकर बीजापुर बादशाह के दर्बार में रहते थे। एक बार किन्हीं कारणों से बाध्य होकर उन्हें मुसलमान बनना पड़ा और बीजापुर बादशाह की लड़की से विवाह भी होगया। पर जब बाजीराव को पश्चाताप हुआ तब उसने जीजिबाई से कहा। जीजिबाई ने पण्डितराव की व्यवस्था लेकर तीर्थ में स्नान करा शुद्ध किया। इस प्रकार कई अन्य भी प्रमाण शुद्धि की पुरातनता में दिये जा सकते हैं पर इतने ही काफ़ी हैं। अतः शुद्धि करनी चाहिए

" मीन व्यथा "

" श्री आनन्द "

मीन व्यथा- देख ठंडक ठंड से सिकुड़ी हुई।

उप उप उचक खिंच खिंच कर रह गई॥

आश जीवन की तजी रोने लगी।

आँख से आँसुअन झड़ी लग कर चली॥

देख यों अरमान दिल का है बना।

डबडबाती आँख से मोती गिरा॥

एक सीपिन मुँह में आ जो गिरा।

खून का कतरा वहीं अमृत बना॥

इस तरह की मौजें जब दे चुके।

खिलखिलाती आश भी बुझने लगी।

बगुले का आगमन - फड़फड़ाते देख बगुला आ गया।

दूत यम का प्राण लेने के लिये॥

दोहा- अपने नयन सब पार कर मछली हुई निराश।

तड़प २ कर रह गई बुझी न दिल की आश॥

बगुले की कहानी- देखे ठेंगन ठेंठ यूं योगी बना।

ईश के गुण याद यूं गाने लगा॥

भूल अपने को वहीं पर बह गया।

प्रेम का आँसू अचानक बह गया॥

आँसू की करामात- देखते ही देखते जीवन बना।

मीन का फटता कलेजा बच गया॥

आंख को ऊपर उठा करुणा भरी।

ईश के गुण गान में वह रत हुई॥

भूल कर वह सब व्यथा में खिल गई।

रात फिर से चान्दनी थी बन गई॥

नयन से बहने लगी मोती झड़ी।

हो आभारी योगी के चरणों लगी॥

बगुले का योग भंग- छोड़ निद्रा योग चीख रोष से।

चोंच को अपनी सम्हालने लग गया॥

बाढ़ इतने में नदी में आ गई।

देखते ही आंख ओझल हो गई॥

बगुले के प्रति- दर्प से ऐंठा हुआ तू हे घमण्डी रह गया।

अब-बस फसाकर ले शिकार। मुंह कोरा ले गया॥

टूट गई सब आश झण्डे। आंसू की बहने लगी।

बहते हुए आकर अचानक स्वाती का तमगा बनी॥

झरते हुए इक बूंद आकर सीप के मुंह में पड़ी।

आकर वहां वह चमचमाती चांदी का मोती बनी॥

बस एक आकर के योंही झट पट नलिनी के दल।

फिर देखते ही देखते वह आप मोती बन गई॥

बगुले को धन्यवाद- हे गुरु तेरा आज योगी मौन दिल से कर गई।

और दर्प की ऐंठ न वह स्थल में दू-खं तेरी हर गई॥ वह दिल जलाती रह गई पर

दिल वह तुम को दे गई। शिक्षा भलाई की तुम्हारे चित्त से वह ले गई॥

सम्पादकीय टिप्पणियां

बाह्य-जगत्

१ आर्यसमाज में शिक्षा

"आर्यसेवक" नामक समाचार-पत्र में, महाशय देवीचन्द जी, principle D.A.V. High school, होशियारपुर, द्वारा प्रकाशित - आर्यसमाज मे शिक्षा की रिपोर्ट को अत्यन्त संक्षेप से उद्धृत किया गया। हम भी इसे अपने पत्र में संक्षेप से उद्धृत करते हैं :—

"भारतवर्ष में कुल ६६८ शिक्षणालय हैं जिन में २२६० अध्यापक या पाठक पढ़ाते हैं। इन शिक्षणालयों में सब के कुल ५४,८८ हैं विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते हैं। इन शिक्षणालयों के खर्च में प्रतिवर्ष १८,८४,४८२. ।।≡)११ खर्च होता हैं। प्रत्येक विद्यार्थी पर प्रतिमास ३३. ।।।-)७ खर्च होता है, तथा प्रत्येक लड़की पर प्रतिमास १६. ।।=)२ खर्च होता है। इन सब पाठशालाओं के स्थान आदि में कुल ६५,३७,२३८ ।।≡)११ खर्च हुआ है। कई पाठशालाएं समाज-मन्दिर में हो लगती हैं। इन कुल शिक्षणालयों में ८ College लड़कों के लिए है तथा दो college लड़कियों के लिये है; ६३ High school लड़कों के लिये तथा १ High school लड़कियों के लिये है; ६० middle school लड़कों के लिये हैं तथा ५२ middle school लड़कियों के लिये हैं - इसी प्रकार ११८ Primary school लड़कों के लिये हैं तथा १११ primary school लड़कियों के लिये है। — — —
८ संस्कृत-पाठशालाएं हैं; ८० हिन्दी-शिक्षणालय हैं। ३१ गुरुकुल हैं। ५५ अछूत जातियों की संस्थाएं हैं। इन के अलावा अन्य भी कई थोड़ी सी छोटी-मोटी संस्थाएं हैं। इस के आगे महाशय देवीचन्द जी लिखते हैं :—

सब से अधिक शिक्षा प्रचार - पञ्जाब में है और इसी से उनकी धर्मपरायणता ज्ञात होती है। यदि सब प्रान्तों के आर्यसज्जन भी पञ्जाबियों के सदृश सच्चे दिल से काम करने लगें तो सम्भव है कि भारत में वैदिक धर्म की

शिक्षा शीघ्र ही सम्पन्न हो जाय। पञ्जाब से दूसरे नम्बर पर शिक्षा का प्रचार यू. पी. में है।"

महाशय देवीचन्द जी ने यह Report तैयार कर के, निस्सन्देह, हमें शिक्षा-विषयक समस्याओं पर आसानी तथा गम्भीरता-पूर्वक विचार करने में सहायता दी है। हम इस समय इन समस्याओं पर विचार नहीं करना चाहते; केवल देवीचन्द जी के उपर्युक्त निर्णय पर ही अपनी सम्मति प्रकाशित करेंगे। म. देवीचन्द जी लिखते हैं कि पञ्जाब में इतनी अधिक शिक्षा का प्रचार होना इस बात का सबूत है कि पञ्जाबी धर्मपरायण हैं। हम पञ्जाबियों की धर्मपरायणता पर नुक्ताचीनी नहीं करना चाहते परन्तु फिर भी देवीचन्द जी के कथन के विरुद्ध यह अवश्य कह देना चाहते हैं कि शिक्षा तथा धर्मपरायणता में कोई समवाय-सम्बन्ध नहीं है। प्रसिद्ध England के प्रसिद्ध विद्वान Herbert Spencer किसी प्रकार अपनी पुस्तक में लिखते हैं कि साधारणतः सर्वसाधारण का यह विश्वास है कि पढ़ने लिखने या शिक्षा प्राप्त करने से आदमी में अधिक उन्नत हो जाते हैं तथा वे पहले से अधिक धार्मिक हो जाते हैं। परन्तु वास्तव में देखा जाय तो यह बात सत्य नहीं है क्योंकि Statistics द्वारा यह जाना गया है कि शिक्षित लोग आचार में अनपढ़ लोगों से अधिक गिरे होते हैं; हां, यह जरूर है कि पढ़े लिखे लोग अपनी चतुराई के कारण गिरावट को छिपा अवश्य लेते हैं। हम म. Herbert Spencer की बात को भी सर्वांश में सत्य नहीं मानते। परन्तु उन की बात आजकल की शिक्षा के विषय में रुपये में १४ आने ठीक है।

उपर्युक्त Report से पता चलता है कि भारतवर्ष में ३३ गुरुकुल चल रहे हैं। निस्सन्देह, इतनी विपरीत परिस्थितियों के होते हुए इतनी संख्या में गुरुकुलों का चलना अत्यन्त आश्चर्यजनक है। क्या इस से यह स्पष्ट सिद्ध नहीं होता कि भारतभूमि गुरुकुल जैसी संस्थाओं के लिये बहुत उपजाऊ है? केवल, अब, ऐसे साधनों तथा तरीकों को ढूंढ निकालने की आवश्यकता है जिस से गुरुकुल की शिक्षा अत्यन्त सस्ती तथा गरीबों को भी प्राप्य हो सके। वे क्या

उपाय है - इस पर हम किसी अगले अङ्क पर अपने विचार प्रगट करेंगे।

२. सौ साल का कार्यक्रम

शताब्दी-महोत्सव के कारण ही, शायद कई महानुभावों को आर्यसमाज का पहिले से ही सौ साल का कार्यक्रम बनाने की सूझी है। मेरे विचार में यह सूझ आर्यसमाज की उन्नति के लिये अत्यन्त लाभप्रद है। सबसे प्रथम-व्यक्ति हमारे सुयोग्य उपाचार्य श्री पं० वेदशर्मा जी हैं जिन्होंने कि बड़े विचार पूर्वक आर्यसमाज के शत सांवत्सरिक कार्यक्रम को हमारे सामने उपस्थित किया है। आशा है कि थोड़े दिनों में जङ्गल की आग की तरह ऐसे कार्यक्रम-विधाताओं की अत्यधिक वृद्धि हो जायगी। इस नवीन विचार के जन्मदाता निस्सन्देह सुयोग्य पं० जी ही हैं, हम पण्डित जी के कार्यक्रम को अतीव संक्षेप से नीचे लिखते हैं :

(१.) १५ वर्ष - देश की स्वाधीनता प्राप्त करना।

(२.) १० वर्ष - स्वराज्य स्थिरता व शासक प्रणाली को वैदिक धर्मानुकूल करना।

(३.) २५ वर्ष - सर्वत्र शिक्षा प्रचार।

(४) २० वर्ष - वेदार्थ निर्णय

(५) वैदिक सभ्यता के अनुकूल राष्ट्र संगठन, तथा आश्रम सुधार।

(६) २० वर्ष - वैदिक सभ्यता को अनुसार राष्ट्र संगठन - वर्णसुधार।

पंडित जी के उपर्युक्त कार्यक्रम के साथ हमारी हार्दिक सहानुभूति है परन्तु हमारी इस कार्यक्रम के साथ पूर्ण सम्मति नहीं है। पं० जी को इस बात को अच्छी तरह जानते ही हैं कि भारतवर्ष में केवल आर्यसमाजियों का ही निवास नहीं है अपितु भिन्न २ मतावलम्बियों का यह घर है। केवल सहानुभूति प्राप्त कर लेने से ही यह आशा कर लेना कि आर्यसमाज राष्ट्र को वैदिक आदर्श के अनुकूल चलाने में समर्थ हो जायगा दुराशामात्र ही है, यह बात सम्यक् तया समझ लेनी चाहिये कि जिस सभ्यता को जितना समय गिरने में लगा है उतने के लिये उससे भी दुगुणा समय लगेगा। इस तरह यह कार्यक्रम १०० साल में पूर्ण न हो कर, १००० सालों में भी शायद मुश्किल से ही पूरा हो।

हां, हम पण्डित जी के प्रथम १५ वर्ष के कार्यक्रम से पूर्णतया सहमत हैं। निस्सन्देह, यदि आर्यसमाज स्वराज्य-प्राप्ति के नेतृत्व को स्वीकार कर भारत को स्वराज्य दिलवाए तो यह सर्वप्रिय हो जायगा - आर्यसमाज का यश और नाम होगा - इस का बहुत प्रचार होगा।

इस बात हमें यह कहनी है कि

पं. जी ने जो अपने कार्य-क्रम को क्रमशः १५, १०, २५, २०, ३० वर्षों में बांटा है - इस में कौन सी आन्तरिक - दृष्टि काम कर रही है। प्रत्येक विभाग में उपर्युक्त तरीके से कितने वर्ष-विभाग किया गया है। यह समझ में नहीं आता।

यह कार्य-क्रम देखने से हमें भी बड़ा प्रिय लगता है परन्तु इस की व्यावहारिकता में सन्देह होने से हमें दुःख भी अवश्य होता है। परमेश्वर करे कि यह हवाई कार्यक्रम सचमुच पूर्ण हो।

3. महात्मा गान्धी

महात्मा जी को इस बार के भ्रमण में आशातीत सन्मान प्राप्त हुआ है। महात्मा जी के इस सन्मान को देख कर, अनेक पुरुषों का यह विचार हो रहा कि है कि महात्मा जी का जेल से पूर्व का युग फिर लौटना ही चाहता है। परन्तु हमारी सम्मति है कि यह बुझते दीपक की उत्कृष्ट ज्योति है जो कि दीपक की मृत्यु को सूचित करती है। निस्सन्देह महात्मा जी के सामयिक आन्दोलन ने जनता पर जादू का सा असर किया परन्तु अब जादू जनता के सिर से उतर गया है। इस प्रगति या आन्दोलन की मृत्यु से ही यह सूचित होता है कि रोगी देश के लिये किसी

अन्य औषधि की आवश्यकता है। रोग पहचान कर समुचित औषधि देना तो कुशल वैद्यों का ही काम है। इस लिये देश के आगे कोई नया ही कार्य-क्रम उपस्थित करने की आवश्यकता है। कोई इस तरह की दवा देनी चाहिये जिसे रोगी पचा भी सके।

४. वर्णाश्रमधर्म प्रचार :—

आज कल आर्यसमाज में वर्णाश्रमधर्म के प्रचार की लहर बड़े ज़ोर से उठ रही है। देखना यह है कि यह लहर स्वयं आवश्यकतावश आर्यसमाज में उठ रही है - या इस लहर को कुछ शक्तिशाली पुरुष, जनता की अपनी इच्छा के न होते हुए भी, बलात्कार से उठवा रहे हैं। मेरी समझ में पिछली बात ही है। इस के अनुसार यह आर्यसमाज में यह गति देर तक लाभकारी सिद्ध नहीं होगा क्योंकि यह स्वाभाविक नहीं है। इस से आर्यसमाज को हानी पहुंचने की ही सम्भावना है - [illegible]। अतः इस विषय में बहुत देखभाल कर आन्दोलन करना चाहिये। "must do something" impulse कई बार बड़े गहरे गढ़े में भी धकेल सकती है "कुछ करना है" इस लिये बिना विचारे कुछ कर डालना यह नीति अच्छी नहीं है।

कार्यकारिणी के निश्चय के अनुसार ब्र. जयदेव, "आर्यसिद्धान्त-पत्रिका" के सम्पादक निर्वाचित हुए तथा ब्र. पूर्णानन्द उपसम्पादक निश्चित किये गये।

वर्तमान अवस्थाओं को देख कर निश्चय होता है कि आर्य-सिद्धान्त-परिषद् के सम्मेल अधिवेशन पूर्ववर्षों की अपेक्षा बहुत सफलता-पूर्वक होंगे।

साहित्य-परिषद् :— यह सभा अन्य सभाओं की अपेक्षा स्थिति के लिहाज़ से वृद्ध समझी जाती है। इस सभा की ओर से "बुद्ध-जयन्ती" मनाई गई जो सफलता पूर्वक समाप्त हुई। हाल ही में साहित्य-परिषद् में श्री पण्डित वागीश्वर जी विद्यालङ्कार का "कालिदास" पर अत्यन्त योग्यतासम्पन्न तथा गवेषणापूर्ण निबन्ध हुआ। अभी यह निबन्ध समाप्त नहीं हुआ। इस निबन्ध की श्रोतृवृन्द ने भूरि२ प्रशंसा की। इस से सभा की उन्नति सूचित होती है। आशा है कि यह सभा वृद्ध होती हुई भी युवा की तरह जोश से अन्य कार्य सम्पादन करेगी।

संस्कृतोत्साहिनी-सभा:— इस सभा के विषय में इतना ही कहना है कि इसकी स्थिति निराशाजनक है। मन्त्री जी यद्यपि उत्साही तथा परिश्रमी हैं तो भी इस सभा की ठीक स्थिति करने के लिये उन्हें विशेष प्रयत्न करना चाहिये। यह कमज़ोरी या ढील वालों की है मन्त्री नहीं। ब्र. समरसिंह जी इस सभा के मन्त्री पद पर नियुक्त हुए हैं।

<u>वाग्वर्द्धिनी सभा</u> :- इस सभा का यह सौभाग्य समझना चाहिये कि इसे प्रायः उत्साही तथा कर्मपरायण कार्यकर्ता प्राप्त होते रहे हैं। आज देश की वर्तमान परिस्थितियां भी, निःसंदेह, इस की सफलता में कारण हैं। अन्य वर्षों की तरह, इस वर्ष भी इस के अधिवेशन सफलतापूर्वक हो रहे हैं। इस वर्ष में इस सभा की वास्तविक सफलता, का अनुमान हाल ही में होने वाले "हिन्दी-साहित्य" सम्मेलन की सफलता से ही हो सकेगा।

इस वर्ष इस सभा के मन्त्रित्व पद पर ब्र॰ शङ्करदेव क्रमशः मन्त्री तथा उपमन्त्री पद पर ब्र॰ रामस्वरूप जी क्रमशः चुने नियुक्त हुए हैं। पर किन्हीं कारणवश, इस समय ब्र॰ रामस्वरूप जी ने ही मन्त्री के कार्यभार को सम्भाला हुआ है।

<u>विज्ञान-परिषद्</u> :— विज्ञान परिषद् का कार्य तथा उत्साह प्रशंसनीय है। कई वर्षों से इस सभा में फिर से नवीन जीवन का सञ्चार हुआ था। इस समय यह सभा किसी अन्य सभा की अपेक्षा कम जोश से नहीं चल रही। प्रतिसप्ताह या प्रतिपक्ष कोई ना कोई योग्यतापूर्ण निबन्ध हो ही जाता है। इस के अधिवेशनों में उपस्थिति भी पर्याप्त होती है।

इस सभा के मन्त्री ब्र॰ ओ३म् प्रकाश जी नियुक्त हुए हैं। इस परिषद् का प्रत्येक सभासद् ही इस की कार्यकारिणी का भी सदस्य होता है।

<u>आयुर्वेद परिषद्</u> :— यद्यपि यह परिषद् आयु के लिहाज़ से बालक ही है परन्तु अपने कार्य तथा उत्साह के कारण किसी कदर किसी सभा से जवानी में कम नहीं है। इस की आशाएं बहुत बड़ी हैं। दिनों दिन यह सभा उन्नति करती ही चली जा रही है।

सम्पादकीय टिप्पणियां.

इस सभा के मन्त्री ब्र॰ विष्णुमित्र जी नियुक्त हुए हैं। इस सभा के सब सदस्य बड़े कर्तव्यपरायण तथा उत्साही हैं। इस लिये इस सभा का भविष्य बहुत उज्ज्वल ज्ञात पड़ता है।

कुछ दिन हुए ही, आयुर्वेद परिषद् का जन्मोत्सव, ब्रह्मचारी कृष्णदत्त जी त्रयोदश श्रेणी के मन्त्रित्व में, बहुत सफलता पूर्वक समाप्त हुआ है। कविताओं में 'वैद्यक-सम्बन्धी चर्चा होना' - इन में साहित्यिक छटा का सर्वथा अभाव होना स्वाभाविक ही था। वर्तमान में इस सभा के सदस्यों में शुद्ध और अशुद्ध दोनों तरह के अनेक कवि विद्यमान हैं। यह इस सभा के लिये बड़े गौरव की बात है।

English club :- गुरुकुल के प्राचीन उद्देश्यों तथा परिस्थितियों के कारण English की सर्वथा उपेक्षा होती रही है। यही [illegible] है कि इस सभा ने अन्य सभाओं की तरह कभी ज़ोर नहीं पकड़ा। परन्तु अब यह आवश्यकता अनुभव होने लगी है कि आङ्ग्ल भाषा का अच्छी तरह अ[illegible] विद्या तथा यश के लिये अत्यन्त आवश्यक है। अतः English club के लिये अब अच्छा क्षेत्र तैयार हो रहा है। आशा है अब यह सभा अपनी यथोचित उन्नति करेगी।

हम इस सभा को सम्मति देते हैं कि यदि यह स[illegible] साप्ताहिक या पाक्षिक कोई पत्र प्रकाशित करे तो बहुत उन्नति की सम्भावना है।

ओ३म्

आजका समय विभाग

बृहस्पतिवार

२०-६-८२

६ ३/४ -८ तक राष्ट्रीय झंडे की स्थापना . वन्दे मातरम् , कुलगीत

खेलें —

प्रातः
७ से १० १/२ तक

कुरसी दौड़
चार टांग की दौड़ (प्रथम बार)
~~[illegible]~~ दौड़
मैडक दौड़
मक्खी दौड़
अन्धा कूद

मध्यान्होत्तर
२ १/२

लम्बी कूद
ऊंची कूद
डण्डा कूद
तकिया युद्ध
तैरी दौड़
बोरी "

सब कुलवासियों को सूचित किया जाता है कि दीपावली के उपलक्ष्य में खेलों का समारोह किया गया है। आप सब महानुभावों से प्रार्थना है कि इसको सफल बनाने में सहयोग दें।

समय विभाग निम्न प्रकार है —

३० - ६ - ८२
बृहस्पतिवार

प्रातः ६-४५ से ७ तक राष्ट्रीय झण्डे की स्थापना
वन्दे मातरम् और कुलगीत

७ से १० तक

मध्यान्होत्तर

बनाना राज का ही कार्य है - इसी प्रकार यद्यपि इन्द्रियां ईंटे नहीं ढोती हैं पर उनसे सामने कल्पनामय आलीशान मकान खड़े करना कल्पना शक्ति या मन का ही कार्य है- यदि दिन को महाभारत का युद्ध पढ़ते हैं - तो मन में इसी के संस्कार ताज़े होंगे- और वह स्वप्न में जलती दिया सलाई से कौरवों की सेना को जलायेगा। यदि आप- बायस्कोप में तमाशा देखकर सोए हैं- तो वहीं के नज़ारों का जलती आग से सम्बन्ध जुड़ जायगा। यदि आप दिन भर सोने की मोहरों में रहे हैं तो आप का मन आप के आगे आकाश से सोने की वर्षा भी कर सकता है—

एवं धीमी २ चलती हवा आप के समीप वर्ती क्रिया से मन पर पड़े ताज़े प्रभाव के अनुसार, सभा में होरहे सुन्दर संगीत, पारस्परिक प्रेमालाप आदि के दृश्य दिखायेगा। इसी लिए हमारे यहां यह विधान है कि सोते समय ध्यान- मन्त्र जाप आदि करने चाहियें ताकि संस्कार उत्तम रहें - उन उत्तम संस्कारों से आप स्वप्न में भी ऋषियों के वेदपाठ का ही शब्द सुनें - अश्लील गानों का नहीं।

इस प्रकार हम साधारण स्वप्नों को तीन कारणों से बना कह सकते हैं।

(१) बाह्य अनुभव (२) आन्तरिक अनुभव (३) मन पर पड़े ताज़े और प्रबल संस्कारों के उद्भव।

जिस प्रकार एक ही प्रकार की ईंटों से भिन्न से भिन्न तरह के मकान आदि बन जाते हैं एवं एक ही प्रकार के बाह्य और आन्तरिक इन्द्रिय जन्य प्रभावों से नाना प्रकार के अच्छे बुरे स्वप्न आते हैं - इसकी विशेष व्याख्या मैं यहां न करने को बाधित हूं इसको आप स्वयं सोच सकते हैं।

अब शेष एक समस्या रह जाती है, वह यह - कि हमें बहुत से सच्चे समाचार स्वप्न में मिलते हैं यह क्यों —

आपने सुना होगा कि सच्चे स्वप्न प्रायः रात के पिछले भाग में आते हैं।

मैं पहले शयन के पांच भाग कर आया हूं - प्रथम तन्द्रा, द्वितीय निद्रारम्भ, तृतीय सुषुप्ति, चतुर्थ स्वप्न, पंचम जागृति।

स्वप्न की अवस्था सुषुप्ति से पहले और पीछे दोनों समय है - प्रथम अवस्था के स्वप्न प्रायः जागृत अवस्था में मन की गति के अनुसार होते हैं - सुषुप्ति के अनन्तर वह पहली गति या विक्षेप कम हो जाता है - बहुधा नहीं भी होता। इस समय मन अधिक विशुद्ध होता है - इस अवस्था में यदि बाहर कोई भाव प्रतीत कर रहा हो तो उसका प्रभाव शीघ्र होगा।

आज कल परीक्षणों से यह पता लग गया है कि विचारों की भी धारायें या किरणें एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाती हैं — मैं यदि चाहूं कि बिना पत्रादि लिखे अपने दूर बैठे मित्र को बुलाऊं तो प्रबल विचार से बुला सकता हूं - पं. देवशर्मा जी सुनाया करते हैं कि - एक बार उनके मन में यह विचार आया कि मैं अपने गुरुजी को मिलने जाऊं - उनके इस विचार ने बहुत तंग किया - और वे बिना किसी पत्रादि के आगे चल पड़े जब वहां पंहुचे - उनके गुरु जी ने कहा कि मैं आप को बहुत याद कर रहा था पर पता मालूम न था। इसी प्रकार आपको भी बहुत ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे यह विचार प्रवाह का सिद्धान्त मानना पड़ता है।

मन बहुत चञ्चल चीज़ है - साधारणतया मनुष्य का मन किन्हीं परिस्थित बातों में लगा रहता है उनकी प्रबलता के कारण इस प्रकार के दूरगत विचारों को इससे मिलने का अवसर नहीं मिलता। सुषुप्ति के अवसर पर क्योंकि - उन परिस्थित विचारों में कम होता है कभी २ नहीं भी होता - इन विचारों को मन से मिलने का अवसर मिलता है - इसी से हमें कभी रात्रि के स्वप्नों में बहुत से स्वप्न सत्य भी होते हैं -

जितना हमारा मन अवस्थित होता है और शुद्ध होगा - उतना हमें ये सत्य-स्वप्न अधिक आयेंगे अपेक्षा झूठे स्वप्नों के ॥

बगुला बना मराल

देखो गति संसार की इसकी अद्भुत चाल।
खाते मछली मत्स्य का बगुला बना मराल ॥
बगुला बनी मराल चाल खोटी न छूटी।
दूर कहां से जाय ज्ञान की आंखें फूटीं ॥
किये पाप पर जन्म ज्ञान जिन इनका पाया।
दाम गया नाम, हुआ दुःख, घेरे है माया ॥ १ ॥

" रसिक "

नवयुवको !

संसार के प्रत्येक देश के इतिहास के अनुशीलन करने से स्पष्टतया पता चलता है कि उन देशों के अभ्युदय और अधःपतन, उन्नति और अवनति, विकास और उस के ह्रास में तत्कालीन नवयुवकों का बड़ा भारी हाथ रहता है।

जिस देश के युवक स्वभावतया साहसी परिश्रमी उद्योगी, और कर्मठ होते हैं उस का अभ्युदय स्वयंसिद्ध है। और जिस देश के युवकों में स्वेच्छाचारता, उच्छृंखलता, निरंकुशता, विलासिता एवं अन्यान्य दोष आजाते हैं उस की अवनति के लिए दैव स्वयं भी कदम बढ़ाते हैं। इसलिए यदि कोई देश उन्नति करना चाहता है तो उस के युवक उस की औद्योगिक उन्नति तथा कलाकौशल की स्थापना तथा उस की गौरव रक्षा में अपने आप को समर्पण करने के लिए तैयार हो जायं।

भारत के नवयुवक गण! हमारा देश भी भूतल का एक बड़ा भाग है। अतः इसे भी संसार की किसी प्रकार की गति से वञ्चित न रहना चाहिए। भारत के युवक पहले एक अंधकारमय गर्त में गिरे हुए थे। किन्तु समय की गति ने उन को ठोकर लगाई - गढ़े से बाहर निकले आँखें मल कर देखा संसार बहुत आगे निकल गया है। मालूम पड़ा कि आज संसार में जो जिन्दा रहना है तो आत्मगौरव और आत्मसन्मान की रक्षा करनी होगी - बिना आत्मगौरव और आत्मसन्मान के - जीना मरने से भी बुरा है। जब हमने अन्य राष्ट्रों की उन्नति और गौरव को देखा तो स्पष्टतया मालूम पड़ने लगा कि हमने सर्वस्व गंवा दिया है। स्पष्ट रूप से मालूम पड़ने लगा कि हम परतन्त्र और गुलाम हैं। हृदय तलमला उठा। सब के मन में यह विचार स्वयमेव जागृत हुआ था। इस दासता के बंधनों को किस प्रकार से तोड़ा जाय इस गुलामी के गढ़े से कैसे निकला जाय — कहाँ है वह हमारा राम - कहाँ है कृष्ण - कहाँ खोये हुए हैं प्रताप और वीर शिवाजी -

इतने में ही एक गगन भेदी आवाज़ ने सब को चौंका दिया. वह बोली हे! भारत के युवको! उठो सुबह का भटका यदि शाम को भी घर आ जावे तो वह भटका नहीं है उठो होश सम्भालो, राम और कृष्ण तुम्हीं में हैं शिवाजी और वीर प्रताप तुम्हारे ही अन्दर हैं उठो और-

उठो और अपनी अपनी जन्मभूमि के बन-
धनों को काट दो। इस पर ध्यान
दो यही तुम्हारे लिए सबसे बड़ा
धर्म है. इसी में श्रेय है, उठ जाओ
क्या तुम यह कल्पना कर सकते हो कि
कि तुम्हारी महान् जाति अपने राष्ट्री-
य मान और राष्ट्रीय अस्तित्व को -
केवल के लिये अन्य राष्ट्रों के स्वा-
धीनियों के साथ आया करे, तुम कि-
सी के स्वार्थ या बल द्वारा किये गये
अन्यायपूर्ण निर्णय को स्वीकार करने
से पहले उस के बल को तो आज़मा
लो। यह याद रक्खो अपनी माता के
बंधन काटने से पहले अपने आप के
बंधनों को अवश्य काट लेना. नहीं
तो सारा प्रयत्न व्यर्थ जायगा. बंधा
हुआ हाथ दूसरे के बंधन को काट
नहीं सकता, पहले तुम स्वयं
इकट्ठे हो जाओ, अपनी एक राष्ट्र-
भाषा बनाओ, तत्पश्चात् स्वराज्य
तो अपने आप ही आ जायगा.
ज़रा उन जातियों की ओर तो
देखो जो पहले बिलकुल असभ्-
य और जंगली थीं; जो रहना खा-
ना पीना इत्यादि कुछ भी नहीं जा-
नती थीं पहाड़ों की कंदराओं में
जानवरों की तरह छिप कर रह-
करती थीं आज कल उन्नति पथ
पर तुम को कितना पीछे छोड़
गई हैं - आज वे हम को गुलाम
करने में ज़रा भी नहीं हिचकि-
चातीं। उन को अपने देश का
पूर्ण अभिमान है, वह अपनी मातृ
भूमि के लिए सब कुछ दे देने के
लिए सदा तय्यार रहती हैं।
हम में देश की ममता नहीं रही
प्रायः स्वतंत्रता और परस्पर
के प्रेम का लेश मात्र भी नहीं
बचा है। हम अपने पूर्वजों की
कीर्ति में कलंक लगा रहे हैं।
एक बार अपनी दशा देख कर
दुख से माथ के साथ आंसू
निकल जाते हैं सचमुच हम
गुलामी की जंजीरों से जकड़े
जा चुके हैं। हमारा मनुष्यत्व
विदेशीय जातियों में ले-
चला गया है। हमारी आत्मा
पवित्र नहीं रही। हृदय में उत्सा-
ह नहीं शरीर में शक्ति नहीं.
चित्त स्थिर नहीं - बल बुद्धि
साहस दूर ता. और धर्म तथा
कर्म हमें सोता देख कभी के
विदा हो चुके हैं। साथ साथ
अपनी दुर्गति की हद कर भी नहीं

आकर कहां के हो, पढ़ते हैं तो मु-
सलमान विदेशीय भाषा. बोलते
हैं तो भी वही भाषा. लिखते हैं तो
भी वही, सोचते हैं तो भी उसी में
चाल चलते हैं तो भी विदेशीय-
तब स्वदेशीयत्व का ज्ञान किस
प्रकार हो, घृणा करते हैं, तो स्व-
देशीयत्व से हम स्पेंसर और मै-
क्समूलर के सिद्धान्तों को अमल
में लाते हैं; मन्त्र जपते हैं तो मै-
कोले का. कविताएं पढ़ते हैं तो
शेक्सपीयर की, उपन्यास पढ़ते
हैं तो रेनाल्ड के परन्तु इस तरफ़
३२ करोड़ भारतवासी तथा उन
के पूर्वजों के विषय में आप
कुछ सीखते हैं तो यही कि यह
३२ करोड़ भारतवासी जंगली
हैं और सदा से दास चले आये
हैं इन के पूर्वज भी जंगली
थे और सदा गुलाम रहे थे। वेद
बच्चों की बिलबिलाहट हैं, अन्य
ग्रामीण गड़रियों के गीत हैं, शि-
वाजी डाकू और लुटेरा था. राम
चन्द्र जी तथा सीता काल्पनिक पै-

में कोई नहीं थे. रामायण मनगढ़-
न्त कहानी है। युवक गण! ऐसी
अवस्था में आप आप सोचिये
किस प्रकार से उन्नति की आ-
शा की जा सकती है ऐसी अवस्था में स्व-
राज्य की आशा करना स्वप्न
देखना नहीं तो क्या है। उन्नति
करने के लिये हम को यह
सब बुराइयें जड़ से नष्ट कर-
नी पड़ेंगी, हमें स्वदेश को
हमें अपनी मातृभाषा स्वीकार
करनी होगी. अपने पुरातन गौरव
को समझने के लिए अपना
सच्चा इतिहास पढ़ना होगा-
हमें जानना पड़ेगा कि हमारे पू-
ज्य पूर्वजों ने किस प्रकार से
आत्मत्याग करके अपनी मातृ
भूमि की सेवा की थी. किन उपायों
से वे इतनी शान्ति से अपना स-
मय बिताये, किन उपायों से
उन्हों ने अपनी अपनी जन्मभूमि
को स्वर्ग बनाया था - युवको!
उठो यह देखो भारत माता तुम्हा-
री ओर टकटकी लगाये अपने

सारे नवजीवों से ही अपने उद्धार की आशा कर रहे हैं, जिस प्रकार ग्रीष्मऋतु में नव बादलों की ओर प्रत्येक आशाभरी नजर से देखता है इसी प्रकार यह ३२ करोड़ भारत जनता भी तुम्हारी ओर आशाभरी नज़र से देख रही है उठो इन की आशाओं को पूरा करने का दृढ़ निश्चय करके उठो, इन आशाओं के पूरा करने में जान देने का निश्चय करके उठो-उठो तुम देश की आवश्यकताओं को तो जानते हो समझ कर लो अवसर बार बार नहीं आते, जिस देश के रुधिर से आप उत्पन्न हुए हैं जिस के अन्न को खाकर आप पुष्ट हुए हैं जिस की कीर्ति में आपकी भी कीर्ति और जिसकी अपकीर्ति में आपकी भी अपकीर्ति है उस जननी जन्मभूमि को आपकी आवश्यकता है, आत्म त्याग करके अपने को शीघ्र कृतार्थ कर लो। आप इसे नष्ट होता हुआ देखते हो नहीं नहीं आप से इसी आशा-भरी नदी की आशाओं की ओर भारत माता के पुत्र हैं आप के प्रत्यक्ष अवयव में भारत जननी का खून है आप के देखते देखते यह कभी नहीं हो सकता कि ईसाई लोग यहां आवें और अपने स्कूल स्थान स्थान पर खोलकर लोगों पर अंधकार का परदा फैलाने का प्रयत्न करें और यहां के निवासियों को गुलामों की तरह मोल लेवें। और आप के देखते ही देखते आपके २५ लाख भाई ईसाई हो जावें, उठो अब सोने की कोई भी गुञ्जायश नहीं है देश को सम्भालो यदि यह विलम्ब कर गये तो अवसर चूक जायगा. और फिर हाथ मलने से कोई भी फल नहीं निकलेगा. उठो अपने असली स्वरूप को समझ कर उठो, तुम्हारी शक्ति अलग नहीं है केवल साहस करने की देरी है अवसर बिल्कुल अनुकूल है केवल कूद पड़ने की ही देरी है।॥

हितों का ख्याल रखना चाहिये॥
अगर प्रजा में से १०० आदमी भी
किसी अधिकारी के विरुद्ध जावें
तो राजा को बिना सोचे विचारे उस
अधिकारी को बरख़ास्त कर देना
चाहिये॥ राजमंत्री का भी निरीक्षण
करे अगर वह भी अन्यायपूर्ण
चाल चलन रखता हो तो उनको अ-
दालत में लाकर दण्ड दे अगर फि-
र भी वह न माने तो उसे फौरन रा-
ज्य के उच्च पद से च्युत कर दे। और
इस प्रकार से अन्याय से आजीवि-
का रखने वाले अधिकारियों के
अधिकारों को राजा छीन ले और
उनका सर्वस्व हरण कर ले। सो
आपने देखा कि आचार्य चाणक्य कि-
तने प्रजा के हित चिन्तक हैं वह
अधिकारियों की कोई सत्ता भी
नहीं मानते हैं अपितु उनको
प्रजा का सेवक ही मानते

ते हैं-
चीन के प्रसिद्ध धर्म Confucius
धर्म के प्रवर्तक Confucious ने
इस बारे में निम्न शब्द कहे हैं-
"सर्व शक्तिमान परमात्मा ने
नीच से नीच मनुष्य को भी moral
sense या Concious दी है
जिस से स्वाभाविक तौर से वह
राष्ट्र में अपना अधिकार बताता है"
इस से यह सिद्ध होता है कि मनु-
ष्य स्वाभाविक तौर से अपने को
राष्ट्र का अंग समझता है और राष्ट्र
में एक अधिकारी के समान ही अ-
पना अधिकार समझता है।
शुक्राचार्य जी इस बारे में राजा को
बतलाते हैं-
राज्ञो नीति हीनानां यथा पश्यन्
हितां प्रजाः। सद्यः छिद्रा-
लोक भवन्ति न भवन्ति च॥
इत्यस्य परमो धर्मः प्रजानां परि-

तारे

१

देखते हैं नित चमकते व्योम में तारे सभी
किन्तु सोचा आपने क्या? कौन तारे हैं कभी।
स्वर्गगङ्गा में खिले ये खिल कमल हैं हँस रहे
फेनलेखा बह रही क्या? सिंधु उस के बीच रह॥

\+ + + +

२

सूखता परिधान किस का फूल हैं जिस पर कढ़े
शामियाना इन्दु का क्या लैम्प बिजली के जड़े।
फूल ये मन्दार के क्या स्वर्ग में हैं खिल रहे
देवपति के क्या नयन ये हैं हजारों दिख रहे॥

\+ + + +

३

मोतियों का हार किस का आज बिखरा व्योम में
पुण्य चमके क्या हमारे पाप के तम तोम में।
देवबाला क्या जलाती दीप घी के स्वर्ग में
पितर बैठे देखते हैं कर्म सब के स्वर्ग में॥

\+ + + +

५

अप्सराएं स्वर्ग में क्या - फूलझड़ियां छोड़ती
कुन्द के उस झाड़ में क्या कुन्दकलियां उछलती।
जलधि के गम्भीर तल में सीप में मोती खिले
चमकते खद्योत तम में, फूल रत्नों के खिले॥

यह कौन ?

१

इस घनघोर निशा काली में ताका करता है यह कौन ?
छिप कर कोई देख रहा है है कोई यह मौन।
झटपट बोल, अनन्त नयन से करता क्यों तारों का व्याज
विपद हमारी देख हमारी क्यों हँसता क्यों करता है नाज़
हँस कर मौज उड़ा ले नटखट, जो कोई देता हूं शाबास
पर कर याद सूर्य का जो तव नयनन का कर देगा नाश॥

नास्तिक वाद।

२

आइये अब, नास्तिकवाद पर बुद्धि, ज्ञान तथा सदाचार के महत्त्वों से विचार करें।

प्रश्न स्वाभाविक तथा स्पष्ट है कि क्या नास्तिकवाद बुद्धि को सन्तुष्ट कर सकता है? हम जिस विशाल संसार में निवास करते हैं उसका प्रत्येक पदार्थ - नहीं अति-नियम तथा क्रम में बंधा हुआ कार्य कर रहा है। अस्तु, नास्तिकवाद से इस विलक्षण नियम तथा क्रम की समस्या का प्रश्न किया जाता है। इस पर एक प्रकार के नास्तिकवाद का कथन है कि इस समस्या का कोई हल नहीं, और वास्तव में इस प्रकार का कोई प्रश्न करना ही सरासर मूर्खता है। परन्तु यह कोई समाधानजनक उत्तर नहीं। यह स्वाभाविकतया मनुष्य प्रकृति में विद्यमान कारणकार्यभाव द्वारा कार्य-कारण तक पहुंचने की इच्छा को बीच में ही नष्ट कर देता है। एवं यदि यह अपने कथन में सफल रहना चाहे तो इसे अपने आप सब प्रकार की जिज्ञासा नष्ट करते हुए संसार भर में से प्रत्येक प्रकार की जिज्ञासा प्रवृत्ति को नष्ट करने का प्रयत्न करना चाहिये। अस्तु।

एक और नास्तिकवाद है। इसका कथन है कि वर्तमान संसार को संसारों की अनादि कारणकार्य-शृंखला का अन्तिम कार्य मानने पर किसी आदिकारण के मानने की आवश्यकता नहीं रहती। परन्तु मनकी इस उपर्युक्त सिद्धान्त से कदापि सन्तुष्टि नहीं हो सकती। वह संसारों की, कि इस प्रकार की किसी शृंखला को मानने के लिये तय्यार नहीं जिसके कि आदि में इसकी आधारभूत कोई

कड़ी नहीं है। वह शृंखला की कड़ियों को अपरिमित तो मान सकता है अनादि नहीं। इस प्रकार तार्किक दृष्टि से बिना आदि परम्परा के संसारों की शृंखला को मानना नितान्त असंगत तथा व्यर्थ है। इसके अतिरिक्त यदि संसारों की कड़ियों की अनादिता को मान भी लिया जाय तो भी क्रम, प्राकृतिक तथा ऐन्द्रिक पदार्थों की संरचना आदि की व्याख्या के लिये किसी कार्यकर्त्री बुद्धि की सत्ता का मानना अत्यावश्यक ही है। जिस प्रकार आगरे के ताजमहल के निर्माण का कालनिर्णय उसके बुद्धिमान कारीगरों के हस्तलाघव या सत्ता का निषेध नहीं करता उसी प्रकार एक संसार या संसारों की शृंखला को अनादि मानना भी उसके सुव्यवस्था देनेवाली बुद्धि का निषेध नहीं कर सकता। इस प्रकार कुछ नास्तिकों का संसार को अनादि मानकर परमात्मा की सत्ता से निषेध करना अत्यन्त हास्यास्पद है।

एक और नास्तिकवाद है। इसका कहना है कि प्रकृति तथा उसके नियम सांसारिक समता, उपयोगिता एवं मानवीय गुणों तथा आकांक्षाओं की व्याख्या कर सकते हैं। परन्तु यह नास्तिकवाद बहुतप्रिय (Popular) होते हुए भी अपनी स्थापना को सिद्ध करने में नाकामयाब सिद्ध हुआ है। यह आज तक सिद्ध नहीं कर सका कि प्रकृति तथा उसके नियम स्वयंसिद्ध हैं अर्थात् उनका कोई भी कारण नहीं है। इस प्रकार उपर्युक्त नास्तिकवाद के मानने वाले विद्वानों की स्थापना ही साध्यसम

है।

एक और नास्तिकवाद है। इसका कहना है कि यह संसार तथा इसके सम्पूर्ण पदार्थ और नियम मनुष्य के मानसिक परिणाम हैं। अर्थात् संसार में जो कुछ भी पंच ज्ञानेन्द्रियों द्वारा अनुभव होता है वह सबका सब मानसिक अवस्थाओं का ही रूपान्तर है। एवं हमारा अपना आत्मा ही अपने विलक्षण गुणों द्वारा अनात्म वस्तुओं को उत्पन्न करता है। यही कारण है कि इस प्रकार के सिद्धान्तों के कारण यह नास्तिकवाद कभी कभी स्वयं-प्रभुवाद (Autotheism) के नाम से भी पुकारा जाता है। महाशय शोपनहार तथा उनके कुछ अनुयायी स्पष्ट शब्दों में मन या दिमाग में ही सम्पूर्ण देशाकालावच्छिन्न पदार्थों की सत्ता को मानते हैं। शायद इसीलिये उनके पीछे आनेवाले जर्मन (Czolbe) तथा ऊबरवेग (Ueberweg) आदि जर्मन विद्वानों ने माना है कि दिमाग का बाह्यस्वरूप वास्तव में सारे संसार को आच्छादित करने वाले एक वृहत् दिमाग का ही सूक्ष्माति-सूक्ष्म प्रतिबिम्ब है। इस प्रकार ऐसा सिद्धान्त जो कि स्वांसिद्ध सम्भावा जाकर अनेक प्रकार की असंगत कल्पनाओं को अवसर देता है अपने आप ही अपना खण्डन करता है।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट हो गया होगा कि कोई नास्तिकवाद या उसके किसी भी स्वरूप में समर्थन नहीं कर सकती। अब विचारना चाहिये कि क्या नास्तिकवाद हृदय को सन्तुष्ट कर सकता है?

नास्तिक ईश्वर में विश्वास नहीं करते अतएव उनके लिये केवल मात्र जगत की ही सत्ता है। प्रश्न स्वाभाविकतया उत्पन्न होता है कि क्या कभी संसार परमात्मा के बिना भी हृदय को सन्तुष्ट कर सकता है? हमारी संमति में परिष्कृत मति का कोई भी आदमी ऐसा नहीं हो-सकता जो कि अपने अनुभव से स्वीकार कर सके कि मानवीय हृदय केवलमात्र खान, पान, सम्पत्ति, मर्यादा, सन्तान, सम्मान तथा आमोद-विहार से ही सन्तुष्ट हो सकता है। अतएव नास्तिकों पर दोष सांसारिकता का दोष लगाना नितान्त अनुचित, अन्याय तथा अपमान जनक है।

इस प्रकार परमात्मा के अभाव में नास्तिक लोग सिर्फ सत्य, सुन्दरता, पवित्रता, दयालुता तथा सौहार्द आदि व्यक्ति तथा समाज को उन्नत बनाने वाले गुणों को ही हृदय की उच्च भावनाओं के केन्द्र के रूप में प्रकट कर सकते हैं। वास्तव में इन उच्च भावनाओं को सांसारिक उपकारता के रंग में रंग कर दिखाना दिखाने वाले तथा देखनेवाले दोनों के लिये बहुत ही भला प्रतीत होता है। आइये जरा उपरोक्त गुणों पर भी सूक्ष्म भाव से विचार करें कि आया ये परमात्मा के विश्वास के अभाव में भी मानवीय हृदय को सन्तुष्ट कर सकते या संसार का कुछ भला कर सकते हैं या नहीं।

शिक्षा की सफलता का रहस्य

एक बुढ़िया अपने बच्चे को लेकर एक महात्मा के पास गई और कहा कि बच्चा रोगी रहता है, मीठा खाने की बहुत आदत है, जहां कहीं से मिलता है मीठा ले आता है, इस कारण इसके दांत भी खराब हो गये हैं। महात्मन्। कोई उपाय बतलाइए और बच्चे को शिक्षा दीजिये ताकि इसकी यह बुरी आदत छूट जाये। महात्मा ने कहा माता, आज से सातवें दिन आना। वह माता सात दिन के बाद बच्चे को लेकर फिर आई। महात्मा ने बच्चे की ओर अच्छी तरह से देखा और उसका हाथ अपनी ओर आकर्षित करते हुए कहने लगे "पुत्र, मीठा अधिक खाना अच्छा नहीं। अधिक मीठे से बहुत ही हानि हुआ करती है। तुम मीठा न खाया करो।" बुढ़िया ने महात्मा को कहा- इतनी सी बात में ने शिक्षा देनी थी। उन्होंने हाथ जोड़ कर धन्यवाद देते हुए कहा कि मैं एक और पूछना चाहती हूं कि आप ने उस दिन यह शिक्षा क्यों न दी? महात्मा ने जवाब दिया कि उस दिन मैं स्वयं मीठा खाया करता था। मेरे कहने का असर न पड़ता। अब मैंने सात दिन तक मीठा छोड़ कर अपने को इस उपदेश के देने का पूर्ण अधिकारी बना लिया है।

इस छोटी सी कथा में एक बहुत बड़े सिद्धान्त - एक महत्वशाली रहस्य की विवेचना की गई है। इस में जिस सिद्धान्त की विवेचना की गई है, यदि उस पर हम ध्यान मनन करें तो वर्तमान शिक्षा जगत की एक बड़ी समस्या हल हो सकती है।

आज कल शिक्षा शास्त्रियों के सामने एक अत्यन्त कठिन प्रश्न उपस्थित हुआ है कि विद्यार्थी जीवन में शिक्षा प्राप्त कर के भी कोई [illegible] नहीं आता जिसे प्रशंसनीय कहा जा सके। एक दीर्घ काल तक भी किसी विश्वविद्यालय में रह कर भी विद्यार्थी

उस सम्बन्ध को नहीं सीखता। आज जब हमारे गुरुकुल पर विचार करने वाले लोगों के दिलों में भी यह प्रश्न विशेषतः उठता है। वे कहते हैं कि - चौदह सालों तक गुरुकुल के पवित्र वातावरण में निवास कर के नियमित जीवन बिताने के बाद भी वे क्यों नहीं सीखते जो कि इतने साल में सीखी जा सकती है। चौदह साल तक विद्यार्थी प्रति न सन्ध्या हवन करते हैं प्रातःकाल चार बजे उठते हैं परन्तु यह इन के जीवन में प्रविष्ट ही होती। विद्यार्थी चौदह साल तक आर्य सामाजिक वातावरण में रहते हैं परन्तु उन्हें आर्यसमाज के प्रति उचित प्रेम नहीं होता।

इन सब प्रश्नों का उत्तर यदि जानना हो तो उपर्युक्त कथा पर गम्भीर दृष्टि डालियेगा उत्तर स्वयं मिलेगा।

मनुष्य जिन परिस्थितियों में रहता है उन से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता। सम्भव है कि एक विद्यार्थी के मातापिता सुचरित्र हों परन्तु उस के पड़ोसियों का असर ही विद्यार्थियों के बिगाड़ने के लिये पर्याप्त है। इसीलिए गुरुकुल खोलते वक्त हमारे पूर्वजों ने नगरों से वर्जित हुए शिक्षणालयों के बनाने की सलाह दी है।

मनुष्य एक चेतन पदार्थ है, उस पर कुत्रिम परिस्थितियों का असर उतना नहीं पड़ता जितना स्वाभाविक परिस्थितियों का। विद्वानों का मत है कि यदि मातापिता कुचरित्र भी हों तो भी उन को बच्चे के सामने कोई कुचेष्टा न करनी चाहिये। इस से बच्चे का दिल साफ रहेगा उस में किसी प्रकार का विकार न आयेगा। परन्तु यह मत ठीक नहीं। मनुष्य जड़ पदार्थ नहीं उस में आत्मा है उस पर इन की कुचेष्टाओं का असर ही होता है काफी असर पड़ता है चाहे उस ने उस समय तक मातापिता की किसी भी बुरी चेष्टा को न देखा हो। यही कारण है कि हमारे यहां सार्वजनिक और वैयक्तिक जीवन को मिला कर नहीं लिया गया। इसने ऐसा व्यक्ति गृहस्थाश्रम के [illegible]

बाढ़

१

देख तेरे कारनामे दिल के टुकड़े होगए।
हाय गङ्गे! पाप हमसे कौन ऐसे होगए॥

२

जिन गरीबों के घरों में, सैंकड़ों बालक पले।
रह गए दो चार, पर वे, शान अपनी खोगए॥

३

दिन रातों का हाल देखो कुछ कहा जाता नहीं।
गिरते २ अब जमीं में लापता वे होगए॥

४

खेल के मैदान देखो कुछ जिनके नील दुकूल थे।
रेत का ओढ़ कफ़न है, और बेसुध सोगए॥

५

मातु गङ्गे! धेनुमाता ले थे कौन अपराध।
उन के बछड़े साथ उनके मरते २ होगए॥

६

लाल कुल के लाल नयनों, से ये हालत देखकर।
देवि के चरणों को फिर से अश्रुजल से धोगए॥

—:०:—

मन।

खूब दौड़ा। खूब दौड़ा। वाह भाई खूब दौड़ा। बार २ यही याद आता है खूब दौड़ा। ऐसी सरपट दौड़ लगाई कि जाते कि इस क्षण सातों समुद्र पार होगया था। मार गया, मार गया बाज़ी। क्या विलायत में भी इतना तेज़ दौड़ने वाला कोई घोड़ा है। घोड़ा क्या, हवाई जहाज़ भी इस के सामने दम हार गये। शाबाश! शाबाश!! खूब रहे। अब तुम्हारे से कौन बड़ा चढ़ा है। घर बैठे २ ही तुम्हारी मदद से सब काम कर लूंगा। रेलगाड़ी में क्या खर्च करना है। खूब दौड़ो, खूब दौड़ो; जितना दौड़ सकते हो दौड़ो। देखते हैं कौन तुम्हारे मुकाबिले में ठहरता है। अच्छा भाई, कलकत्ता जाकर तो दिखलाओ। ओह! यह क्या, तुम तो मेरे कहने से पहले ही कलकत्ते भाग गये। अब की नहीं। दोबारा दौड़ लगाओ। परन्तु शर्त यही है— मेरे कहने पर। अच्छा, लो, एक, दो, तीन। नहीं, नहीं... यह तो तुमने फिर नहीं किया। मेरे कहने पर तो चलते नहीं।

× × × ×

तुम्हारे कहने पर तो दौड़ा था। यह तो मेरी खूबी है कि कहने से पेशतर जहां कहो हाज़िर होजाता हूं। मेरी तेज़ी के कारण ही इतना मालूम पड़ता है।

× × × ×

अच्छा माना तुम ठीक कहते हो। तुम्हारी चाल ही इतनी अधिक है कि मानी नहीं जा सकती। तब तुम सच मुच बाज़ी मार गये। अच्छा जाओ। रस्किन का सन्देश ले आओ।

× × × ×

ओह! अब तक नहीं आये क्या बात है। अब इतनी देरी क्यों लगा दी। अच्छा, इन्तज़ार ही करें। देखते हैं, कब लौटता है।

अच्छा, आगये। बड़ी देर लगा दी। हां, तो फिर क्या सन्देश लाये हो। सुनाओ तो सही।

× × × ×

अच्छा, अब तक कलकत्ते के आलीशान मकान तथा ट्रामों के पीछे ही देखते रहे। क्या विद्यार्थियों के दल तथा वहां के पार्कों के देखने में तुमने सारा समय बिता दिया। हमने तो रस्किन का सन्देश लाने भेजा था और तुम कलकत्ते में चक्कर मारते रहे। क्यों, क्या भूल गये थे। अच्छा, जाओ, फिर जाओ, इस बार रस्किन का सन्देश ज़रूर लाना। भूलना मत।

× × × × ×

न जाने इतनी देरी कहां होगई। इसबार तो पूरी तरह से याद दिला कर भेजा था। कहीं कलकत्ता तो नहीं चला गया। क्यों वह कलकत्ता का बड़ा शौकीन नज़र आता है। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता है। वह तो आज्ञापालक है। पिछली बार तो वह भूल गया था। अब की तो याद करा के भेजा था। न जाने कहां लापता होगया है। देखें कब आता है।

× × × × ×

क्यों भाई! कहां गये थे। बोलते क्यों नहीं। हैं! क्या बम्बई चले गये थे। वहां के बाज़ारों में चक्कर लगा रहे थे। वहां जाने को तुम से किसने कहा था। अपना काम भूल गये थे। यदि नहीं भूले थे तो क्यों नहीं गये। बस इसी वास्ते - कि तुम्हारी मर्ज़ी बम्बई की सैर करने की थी। तुम बड़े नालायक निकले। तुम जैसा नटखट मैंने कभी नहीं देखा। तुम भी खूब ठहरे- जो आया कर बैठे। किसी की सुनते भी तो नहीं हो। अपने मालिक से पूछ तो लिया करो। हम आवाज़ें मारते 2 थक जाते हैं तुम्हारी दो तोला ज़बान टस से मस नहीं होती। न जाने सारा दिन कहां आवारा गर्दों की तरह फिरा करते हो। किस काम के लिये बुलाना चाहता हूं तो झट कहीं दौड़ जाते हो। पलट कर आने पर आंख झपकते फिर कहीं गायब हो जाते हो। तुम्हें एक बार फिर चेतावनी दे देता हूं। आगे से मैं एक नहीं सहने का। हमने तुम्हें इधर उधर बहुत चक्कर

लगाते देखा है। कभी गंगा में गोते मार रहे होते हो तो फिर कभी मुलतान, कलकत्ते और बम्बई की सैर करते चले जाते हो। आवाजें देने पर भी अनसुनी करके उसी में मशगूल रहते हो। न जाने तुम्हें कितनी बुरी आदत डलवा दी है।

× × × × ×

तुम भी अच्छे रहे। पहले शाबाश देते रहे। जब हम उस में मजा लेने लगे तो तब त्योरियां चढ़ाते हो। तुम्हीं तो शुरू२ में कलकत्ता और बम्बई भेजा करते थे। जब मैं एक दम पहुंच जाता था तब तुम्हीं तो होते थे जो प्रशंसा के पुल बांधा किया करते थे। जब हमने तुमसे सलाह लेनी बन्द करदी तो मुंह सुजा लिया। यह कोई नीति है। हम तो [illegible] जो जी में आयेगा करेंगे। अब तो तुम्हारी एक भी नहीं सुननी। हम कोई तुम्हारे गुलाम थोड़े ही हैं कि जब होता मारो हाथ जोड़कर सामने आ-खड़े हों। दासता का जमाना अब जाता रहा। फिर कभी ऐसी भूल न करना। मेरी सहायता के लिए तो सारा यूरोप तथा अमरीका भी खड़ा है। इस काम में तो एशिया भी मेरी मदद करेगा। कुछ ताकत हो तो कर दिखाओ। ऐसे तो बड़ी२ मारते हो तुम्हारे से होना कुछ नहीं। 'फिर पछताये क्या होत जब चिड़िया चुग गई खेत।' पहले तो मन की नींद लूटते रहे। अब देखो तो सही वश में होने को कहता है। अब तो मैं तुम्हें अपनी नाच नचाऊँगा। देखता हूँ कौन बाजी मारता है। सुरसा का नाम लेकर मुझे डराना चाहते हो। याद है हनुमान उस से भी साफ२ बच गया था। मशक का आकार धरकर हनुमान ने कैसी चालाकी दिखाई थी। मैं तो पवनसुत का दादा हूँ। पवन मेरा ही लड़का है। ढीलपोल होने से कुछ नहीं बनता। लम्बा चौड़ा हाथी भी त्रिशूल को कहां मानता है। तेरी मेरे सामने दाल क्या गल सकती है। खबरदार, कभी मुझे वश में करने का नाम भी लिया।

× × ×

[एकान्त में]

(हथेली पर सिर रख कर)

हाय! अपनी जिन्दगी तबाह कर दी। किस बदमाश का मेरे से पाला पड़ा। सिर पर चढ़ाने का यही फल है। वशिष्ठ महाराज जी का कहना ठीक निकला। इसको पहले से ही लगाम से बांधे रखता तो ठीक होता और ऐसी नौबत आज न सुननी पड़ती। क्या करें-कुछ सूझता नहीं। विधिना की गति न्यारी। अब तो यह हाथ से जाता रहा। परन्तु अकेला रहना भी तो दुष्कर प्रतीत होता है। यदि परमेश्वर मनुष्य को बिना इस धूर्त मन के रहने का मार्ग दिखा देता तो मैं कभी इस बदमाश का मुंह भी न देखता। परन्तु क्या किया जाय इसके बिना तो एक क्षण भी रहना मुश्किल है। आखिर कुछ करना ही पड़ेगा। (कमर कसकर) ओह! यह भी कोई कठिन बात है। इतनी जल्दी निराश क्यों होजाऊं। इसे अभी पकड़ लाता हूं। अब की मैं एक क्षण के लिए भी न छोड़ूंगा। इसने काफ़ी तंग कर लिया। मैं इसकी सूरत कभी नहीं भूलने का। कोई कितना ही शोर मचावे मैं इसे पकड़ लाऊंगा।

× × × ××

चल कहीं के धूर्त, नालायक तेरे जैसा मैंने कोई कृतघ्न नहीं देखा। मैं तुझे नहीं छोड़ने का। अब तुझे बांध कर रखूंगा देखें कहां जाता है। स्वतन्त्रता का तूने यही फल दिया। अबतक तुम्हारा बहुत लिहाज किया पर तुम तो मधु से लिपे हुए विष पात्र निकले। न कलंक का भेद गा न बजा। हृदय की कोठरी में बन्द रखूंगा।

× × × ×

जी हुजूर। जो आज्ञा। गुस्ताखी माफ हो मुझे होश न थी। मैं पागलपने में ही सब बकवाद कर रहा था। मुझे क्षमा कीजे।

× × ××

कैसा दबाया। अब कुछ आती है जब से इसे काबू किया है सब शान्ति है। कोई झगड़ा न टंटा सब आनन्द ही आनन्द है। जीवन का यही अमृत रस है। यदि सारा संसार ही इसी तरह करने लग जाय तो संसार का क्या ही भला हो। आज से मैं इसी का उपदेश करूंगा "भाइयो! मन को वश में करो। नहीं तो यह मन तुम्हें इधर उधर भटकाता रहेगा।" इति.

श्री महात्मा गान्धी जी ने जो कुछ कहा। उस पर मुझे कुछ विशेष टीका टिप्पणी करने की विशेष आवश्यकता नहीं है। जिन्हें उनके भाषण सुनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। वे ही जानते हैं। कि उनका एक २ शब्द तुला हुआ या स्पष्ट और जादू का सा प्रभाव करने वाला होता है। लोग कहते हैं कि वे केवल पतले और दुबले हैं। उनकी आवाज भी दर्शकों तक कठिनता से पहुंचती है। ठीक होगा। पर मैं तो मन्त्रमुग्ध रसास्वादन कर रहे थे।

× × × × × × × × ×

भरी सभा के सन्मुख माननीय पं. मालवीय जी ने असहयोग के प्रस्ताव विरोध किया। इसलिये उनका साहस सराहनीय था। यदि कोई उनके भाषण के विषय में मेरी वैयक्तिक सम्मति लें। तो मैं कहूंगा। कि वक्तृत्वकला, अलङ्कार और रसास्वाद के ख्याल से उनकी वक्तृता सारी परिषद भर में श्रेष्ठ पूर्ण थी। पर यदि सामयिक भाव, सार्थकता, युक्ति और प्रभाव से उसकी महत्ता ई जानी हो। तो तब वह बहुत उथली, सारशून्य और प्रभावरहित थी। मुझे तो अब तक उनकी वक्तृता का वास्तविक अभिप्राय ही समझ में नहीं आया। और न यह ही समझ आया। कि वह किस असली बात पर अधिक बल डालना चाहते थे। काशी के हिन्दू विश्वविद्यालय और अलीगढ़ के मुसलिम विश्वविद्यालय के सरकार से संबंध तोड़ लेने के विषय में भी परिषद ने एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पास किया था। इसका सारा श्रेय बाबू शिवप्रसाद गुप्त को और मौलाना शौकत अली को है। दोनों ही सज्जनों को अपने २ विश्वविद्यालय की ईंट ईंट का पता था। इसलिये उनकी वक्तृताओं का सारपूर्ण और प्रभावजनक होना स्वाभाविक ही था।

× × × × × × ×

सचमुच वह समय बड़ा ही दुःखदायी और कुत्सित था। जिस समय कि माननीय पं. मालवीय जी असहयोग के प्रस्ताव का और विशेषतः हिन्दू विश्वविद्यालय से संबंध रखने वाले अंश का विरोध करने के लिये खड़े हुये थे। श्री मालवीय जी की थोथी और लचर दलीलें बाबू शिवप्रसाद गुप्त की मैशीनगन के सामने हवा हो गईं। श्री मालवीय जी की इस दयनीय दशा को देखकर मेरे दिल में यही आ रहा था कि यदि मैं भी कुछ पढ़ा लिखा होता और कुछ बोलना जानता। तो मैं भी मालवीय जी की अवश्य सहायता करता। पर मैं तो अनपढ़ गंवार ही था। परन्तु सभापति के भाषण की तरह यह परिषद भी अपने प्रान्तीयता के रूप की व्यर्थता सिद्ध करती। यदि श्री पूज्यपाद श्रद्धानन्द जी बेगार को रोकने और इस प्रान्त से रफ्तनी को बन्द कर देने के विषय में दो प्रस्ताव न उपस्थित करते। मैं चूंकि गांव के ही रहने वाला हूं। और मेरी दृष्टि में काशी वा अलीगढ़ के विश्वविद्यालय, खिलाफत और पंजाब के मामले की अपेक्षा यह अधिक अर्थ और महत्व रखता है। इसलिये मैं तो स्वामी जी का अत्यन्त कृतज्ञ हूं। कि उन्होंने ऐसे आवश्यक प्रस्ताव को जनता के सन्मुख उपस्थित किया। प्रतापगढ़ के किसानों के संबंध में भी जो प्रस्ताव पास हुआ था। वह भी अपनी जगह कुछ कम आवश्यक नहीं है।

× × × ×

राजनैतिक परिषद के विषय में मुझे कुछ और विशेष कहना नहीं है। इसके साथ और सभा सम्मेलनों के जो जलसे हुवे थे। उनमें मुझे जाने का सौभाग्य नहीं हुआ। इसलिये उन के लिये मैं चुप हूं। पर हां प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन में अवश्य गया था। क्योंकि गंवार होते हुवे भी मुझे हिन्दी से गाढ़ प्रेम है।

× × × × ×

प्रान्तीय राजनैतिक ~~सम्मेलन~~ परिषद जितनी सफलता और चपलता के साथ हुई थी। उतनी ही असफलता और अशान्ति के साथ यह सम्मेलन हुआ था। ऐसी मेरी दृढ़ धारणा है। छोटे २ दोषों को छोड़ते हुवे भी कई ऐसी बातें हुईं। जो मुझ जैसे गंवार की नजरों से न छिप सकीं।

× × × × ×

स्वागतसमिति के अध्यक्ष का भाषण कुछ विशेष उच्च कोटि का नहीं था। सम्मेलन के सभापति श्री पद्मसिंह जी शर्मा का भाषण यद्यपि ओज पाण्डित्य और विद्वत्ता के साथ लिखा गया था। पर अनुचित रूप से लंबा होने के कारण उसने न केवल मुझे पर कईयों को सुला ही दिया।

× × × ×

सम्मेलन ने जो प्रस्ताव पास किये। उनसे ज्ञात होता था। कि उस के कर्ता धर्ता हम अभी समय की गति से बहुत पीछे हैं। भारत में असहयोग बढ़ते के विषय में क्रियात्मक कदम हो रहा है। पर इस सम्मेलन में अब भी सरकार के प्रति प्रार्थना उपासना के प्रस्ताव पास हो रहे थे। मुझे यह देख और भी अधिक आश्चर्य हुआ। कि प्रस्तावों का रूप और ढांचा लगभग वही था। जो कि अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन में प्रतिवर्ष पास हुआ करते हैं। खैर मैं अपने पाठकों को कहूंगा। कि वे इस बात पर खुश होवें। कि सम्मेलन हो तो गया। पहिले तो उसके होने में भी बहुत सन्देह था।-- लो। अच्छा अब मैं आपसे विदाई मांगता हूं। इति शम्।

× × × ×

भविष्य वाणी.

प्रिय पाठकवृन्द! इस वर्ष हमने ज्योतिष द्वारा फलों की गणना की है, चलते पुर्जों की भी अक्ल हैरान है। नव ग्रहों की विचित्र चाल से हम तो खुद पेचीदा चक्कर में पड़ गये हैं, फिर भी जो मालूम हुआ है, उसे आपके सामने रखते हैं, आप घबराई ये मत हो जावही जो परमेश्वर की इच्छा है। न इस पर हमारा बस चल सकता है और न आपका।

(१) जो जो सर्वप्रिय होंगे वही अप्रिय बनेंगे.

(२) इस वर्ष प्रभु का प्रकोप नहीं है इसलिये डाक्टरों की दाल न गलेगी सिर्फ अपना पेट ही पाल सकेंगे।

(३) वकीलों को अपना काम छोड़ना पड़ेगा.

(४). गोरों को इस देश को छोड़कर कहीं अन्यत्र वास करना होगा.

(५). हिन्दू और मुसलमान अभी एक नहीं हो सकते.

(६). चीजों का भाव साधारण तौर पर घटता बढ़ता रहेगा व्योपार में कोई विशेष अन्तर न पड़ेगा.

(७). कपास की खेती खराब होने पर भी रूई का भाव मन्दा रहेगा.

(८). गवर्नमेण्ट कायम रहेगी.

(९). जो सहायक होंगे वही किनारा कर लिया करेंगे.

(१०). अदालतें खूनी मामलों से खाली न रह सकेंगी.

(११). हुक्काम हकीम नवकर ही रह सकेंगे अन्यथा बड़ी मुश्किल पेश आवेगी. पहिले तो बकरी चराकर जीविका अब न जाने क्या करेंगे.

(१२). आयर्लैंड को स्वराज्य आज से (२१-१०-१९२०) एक वर्ष २ महीना १५ दिन के रात के ९ बजकर १० मिनिट ४ सैकेंड पर मिलेगा.

सू.	मं.	बु.	बृ.	शु.	श.	रा.	के.
७	९	६	४	८	५	६	०
७	३	२१	२४	१८	२	१२	१२
१५	२२	१९	४४	२०	२३	४०	४०
५१	३२	२१	०	४८	५	२०	२०
६०	४						
४३							

हमारे सहयोगी

महाविद्यालय दैनिक.

महाविद्यालय दैनिक दो दिन से अखाड़े में उतरा हुआ है - खूब चिकना चुपड़ा है - आहा!! देखते ही रसलोलुप भ्रमरगण चारों ओर से घिर जाते हैं। दैनिकपत्रों में आज तक ऐसी सजावट देखने में नहीं आई - वाह, वाह क्या कहने ऐसी ऐसी चित्रकारी में होती रातें जागकर भी ऐसा महाव्रत का फल न होता तो फिर कब होता।

पत्र निकला है विजयदशमी की खुशी में - किन्तु आदि से अन्त तक देखने पर भी लेख से अधिक दशमी पर आपको लेख न मिलेगा। कविता तो एक भी पृष्ठ विजय पर नहीं है, बीती बातों पर विशेष लेख लिखा गया है - पं. वागीश्वर जी की पहिले अंक में तथा दूसरे अंक में जो कवितायें निकली हैं वे सब [illegible] पहिले निकल चुकी हैं उन्हें ही फिर उतारा गया है।

दैनिक पत्रों में समाचार खूब होने चाहियें उसमें यह ऐसे ही दर्शनीय समाचार देता है जैसा कि 'जोगिया समाचार'। स्थानीय महाविद्यालय के समाचार उसमें इतने ही होते हैं जितने मथुरा के मथुरा समाचार में।

पत्र में मौलिकता की बहुत कमी है। मालूम होता है कि इसके सम्पादक सम्पादक नहीं हैं अपितु संग्रह-कर्ता हैं। चारों ओर से लेख इकट्ठे किये गये हैं किन्तु कोई सम्पादकीय लेख नहीं है और न ही कोई टिप्पणी। हो कहां से जब कि सम्पादक महोदय कोई लेख ही नहीं लिखते।

किन्तु सम्पादक हैं बड़े [illegible] कभी तो उन्होंने '[illegible]' संवाद में कोई गुप्त रहस्य ढूंढ निकाला है। मालूम होता है कि वे अपने नाम के चक्कर में पड़ गये हैं। हम लिखे देते हैं कि वहां सोम का अर्थ चन्द्रमा है और अंगिरा एक नक्षत्र है। [illegible] वे हैं ही [illegible] उन्होंने हमें [illegible] का दूसरा भाई बनाया है। मालूम होता है कि वे [illegible] की नीति से सर्वथा अपरिचित हैं नहीं तो वे कभी ऐसी भूल न करते।

संग्रह करने का परिश्रम अत्यन्त सराहनीय है। पत्र यदि चाहे तो अपने ढंग आप निकाले [illegible] छोड़कर पर्याप्त [illegible] कर सकता है। लेख पुस्तक [illegible] हम चाहते हैं कि यह पत्र दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करे।

विजय-कुसुम.

आज इस पत्र के दो अंक हमें प्राप्त हुये हैं। पत्र पढ़ने वालों का खूब मनोविनोद करता है - कुछ ऐसी मिठाई होती है कि लोग हंसी रोकने पर भी एक बार हंस ही पड़ते हैं। समाचार कविता में नवीन रीति से वर्णित होता है। ~~[illegible]~~ सम्पादकों से एक बार अवश्य पढ़ना चाहिये।

इस का एक अंक [illegible] लेकर आया है - वह भी प्रशंसनीय है।

भारत में विदेशी [illegible]

Protection लगाने से यह
हानि होने की सम्भावना है कि
विदेशी लोग यहां आकर अपने
ही व्यवसाय के कारखाने खोल
दें, जिस पर टैक्स लगाया गया
है और सारा लाभ हस्तगत करलें
अर्थात् विदेशी पूंजी के द्वारा
सारा लाभ विदेशी ही लूट ले जाएं,
जैसे जूट के व्यवसाय पर भारत
का एकाधिकार (monopoly)
होने पर भी हमें कोई लाभ नहीं
होता। क्योंकि जूट के सब कार-
खाने विदेशियों के ही आधीन
हैं और इनके प्रबन्धक वि-
देशी ही हैं। जूट की मिलें
भारत में २०० के लगभग हैं।
इन सब में प्रायः विदेशी पूंजी
ही लगी हुई है। इस प्रकार सारा
मुनाफा विदेशी ~~विदेश~~ चूस
ले जाते हैं। इन सब
Planter भी अंग्रेज ही हैं।
अतः यदि Protection द्वारा
जूट के व्यवसाय की उन्नति हो

तो उससे भारत को क्या लाभ होगा।
'सर विट्ठलदास ठाकरसी कहते
हैं कि "हम यह निश्चय किये
बिना नहीं रह सकते कि जब तक
भारतीय व्यवसाय (Industry)
ही मिट्टी का तेल, लोहा, सोना,
तथा चांदी आदि खनिज पदार्थों
को उठाने में समर्थ न हो तब तक
भूमि के नीचे ही रहने देने चाहियें
और भारतीय व्यवसाय की उन्नति
स्वदेशी पूंजी से की जाय"।

इस प्रकार से विदेशी पूंजी के
भारत में आने से भारतवासियों
को कोई लाभ नहीं। विदेशी पूंजी
द्वारा यदि भारतीय व्यवसाय भू-
मण्डल में सब राष्ट्रों से भी अधिक
उन्नत हो जाय तो भी कोई लाभ नहीं।
इसके बजाय इस प्रकार जितना
अधिक व्यापार बढ़ेगा हमें उतनी
ही अधिक हानि होगी। क्योंकि
पूंजी तो सब विदेशियों की
होगी और कारखानों में
पदाधिकारी भी विदेशी ही हों[illegible]

केवल ८ आने वाले मज़दूर भारतीय होंगे। इस उन्नति से हमें क्या मिलेगा? केवल मजदूरी और ८ आने। एक मैनेजर का वेतन ५००) से लेकर ८-१० हजार से भी अधिक होता है। श्रमियों का वेतन ८ आने या १० आने ही होता है। यदि श्रमियों का वेतन १) प्रतिदिन और विदेशी अधिकारियों व उच्च-पदाधिकारी का ५००) मासिक भी मान लें तो भी जब एक भारतीय को ३०) मिलेंगे तब एक विदेशी को ५००) मिलेंगे अर्थात् एक २ विदेशी लगभग २० गुणा केवल वेतन के रूप में ले जायगा। इतना ही नहीं, पूंजी भी विदेशी हो लगी हुई है और उस व्यवसाय का लाभ भी विदेश में ही चला जायगा। जैसे जूट के व्यवसाय का हाल हुआ। युद्ध के दिनों में जूट के व्यवसाय में २००% से भी अधिक लाभ हुआ परन्तु सब लाभ विदेश गया। उपभोक्ताओं को से अपील की जाती है कि Protection लगाने से तुम्हें कुछ काल के लिये कठिनाई होगी। भारतीय व्यवसाय की उन्नति के अनन्तर सब सामान सस्ता हो जायगा। तुम्हारा जो धन विदेशी सामान के द्वारा विदेश को खिंचा चला जाता है वह बन्द हो जायगा। किन्तु यदि विदेशी पूंजी द्वारा बढ़े हुए व्यवसाय को लाभ हुआ तो उन बिचारे उपभोक्ताओं को क्या लाभ? उनका धन तो अब पूर्व से भी अधिक विदेश को जायगा। फिस्कल कमीशन के अल्पमत ने कहा था कि भारत में व्यावसायिक उन्नति का विचार करते हुए यह ध्यान रक्खा जाय कि –

(क) कच्चा माल अपने देश का ही काम में लाया जाय।

(ख) इस के लिये पूरा प्रयत्न किया जाय कि इन का लाभ भारत में ही रहे।

(ग) यहां नये २ व्यवसाय चलाये जायं इसलिये Protection लगाते समय सरकार को ध्यान रखना चाहिये कि भारत में विदेशी पूंजी न आ सके।

'अन्नपूर्णा'

	कार्य विवरण

प्रथम बैठक —

सभास्थल में प्रविष्ट होने पर सजावट की मनोहरता चित्त पर अंकित हो जाती थी। स्वच्छ सुन्दर तथा विशाल प्रसन्नतागार भवन का श्रृंगार झण्डियों बेलों तथा सुराहियों से भली प्रकार किया गया था। एक बात बहुत खटकती थी — वह यह कि नेताओं के प्रणाम में सुरुचि का अत्यन्ताभाव था। चित्र बिना स्थान उद्देश्य या समय का विचार किये ही लगाये गये थे। दूसरी कमी यह थी कि संवाद दाताओं को रद्दी की टोकरी की भाँति उत्तम स्थान दिया गया था। उनका स्थान प्रधान जी के विशाल मेज के नीचे था। वहाँ से कुछ दिख सकता था तो वह केवल प्रधान जी के वन्दनीय चरण ही थे। और प्रबन्ध उत्तम था। प्रतिनिधियों तथा स्वागत समिति के सदस्यों के बैठने के [illegible] है।

[illegible] तरह " का

[illegible] र

सम्मेलन की कार्यवाही प्रारम्भ हुई। स्वागत समिति के अध्यक्ष जी ने अपना भाषण पढ़ा भाषण परिश्रम से लिखा हुआ प्रतीत होता था। विचार अभिनन्दनीय थे शैली उत्तम थी। उनके भाषण के बाद स्वागत गीति गाई गई। फिर प्रधान जी के चुनाव का प्रस्ताव भिन्न भिन्न भाषाओं में किया गया। प्रधान जी गुजराती के सुप्रसिद्ध कवि हैं। आपका शुभनाम पं. [illegible] जी विद्यालङ्कार है। आप प्रतिभावान् हैं, कई बार आपने अपनी प्रखर प्रतिभा का परिचय दिया है। साहित्य के आप पुराने सेवक हैं। आपको यह गौरव देना

प्रधान

प्री

कार्य विवरण

- कि बार बार प्रार्थना करना जब कि वह अस्वीकृत कर दी जाय अत्यन्त अनुचित है। ब्र. बुद्धदत्त जी गुरुदेव ने भी द्वितीय भाग का विरोध किया। और भी कई विरोधी सज्जन थे। सम्मति ली जाने पर (क) भाग स्वीकृत हुआ तथा (ख) भाग अस्वीकृत हुआ। तदनन्तर प्रस्ताव सं. ५ ब्र. जयदेव जी ने उपस्थित किया। ब्र. विष्णुदत्त जी ने समर्थन किया। ब्र. धर्मदेव जी ने क और ख भागों का परस्पर विरोध दिखाया। सम्मति लेने पर पूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुआ। प्रस्ताव सं. ६ पर ब्र. भीमसेन जी ने विरोध करते हुए "हिन्दी" के स्थान पर "देवनागरी" न रखने जाने पर आक्षेप किया। पं. सत्यव्रत जी ने "हिन्दी" को ठीक बताया। प्रस्तावक ब्र. इन्द्र जी ने शंकाओं का [illegible] समाधान किया। प्रस्ताव स्वीकृत [illegible] नीति हुई।

तदनन्तर अतिथि श्री नारायण चतुर्वेदी अध्यक्ष इन्टरमीडिएट कालेज लखनऊ ने अपनी शक्ति भर से उपस्थित लोगों को आवाहन किया। प्रस्ताव सं. ७ पर व्यवस्था सम्बन्धी विप्रतिपत्ति उठाई गई अतः पहले प्रस्ताव सं. ८ उपस्थित हुआ। सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ। पुनः ब्र. इन्द्र जी ने प्रस्ताव सं. ७ उपस्थित किया। पं. सत्यव्रत जी ने विरोध किया प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ। इसके बाद प्रस्ताव सं. ९ तथा प्रस्ताव सं. १० ब्र. समरसिंह जी तथा ब्र. धर्मदेव जी द्वारा उपस्थित किये जाकर स्वीकृत हुए। आज की कार्यवाही ५ बजे [illegible] सायंकाल समाप्त हुई।

भाग ६

विजय-वैजयन्ती
संयुक्त दैनिक महाविद्यालय.
भाग ६
सम्पादक
कु. इन्दुसेन
अंक १
तन की दुति श्याम सरोरुह लोचन
कञ्ज की मंजुलताई हरैं,
अति सुन्दर सोहत धूरि भरे
छवि भूरि अनंग की दूर धरें ।
दमकै दुतियां दुति दामिनि ज्यों
किलकैं कल बाल विनोद करें,
अवधेश के बालक चारि सदा
मम मानस मन्दिर में विहरें ॥

विजय वैजयन्ती

३० आश्विन १९८२

स्टेज पर

नाट्यशाला पर से पर्दा उठा है, रंगमंच पर नट नर उतरे हैं। नए दृश्य दिख रहे हैं इन को देखने की इच्छा से 'विजय वैजयन्ती' भी स्टेज पर अवतरित होती है। आगला हृदयंगम करने के लिए पुराने दृश्यों का सिंहावलोकन भी अनुचित न होगा पर फल दायी होगा।

× × ×

गत वर्ष जब 'वैजयन्ती' आंखों से ओट में हुई थी तब बंगाल के हृदय पर लार्ड लिटन ने 'बंगाल ऑर्डिनेंस' द्वारा प्रहार किया था इस कारण देश भर में नवीन उत्तेजना फैल रही थी नूतन चैतन्य प्रवाह प्रवाहित हो रहा था, नई स्फूर्ति की दीप्ति से दीप्तिमान हो रहा था। दल के भावी गौरव की रक्षा के लिए नए भावों से देश आन्दोलित हो रहा था। इस हलचल और आन्दोलन ने एकता सम्मेलन का आयोजन किया। नेता लोग कई बार जमा हुए पर देश के विभिन्न दलों को जोड़ने वाले सूत्रों का पता न लगा सके। नेताओं ने घोषित कर दिया कि इस समय एकता सम्भव नहीं है। [illegible] इस ओर बढ़ने वाले परम मन्दगति से बढ़ रहे हैं।

× × ×

देश की जीवित जाग्रत शक्ति एक-मात्र स्वराज्य दल की शक्ति बढ़ती गई। म. गान्धी ने इस समय स्वराज्य दल की शक्ति बढ़ाना अपना कर्तव्य समझा। स्व. देशबन्धु से हाथ मिलाने के लिए आपने चरखा सूत मताधिकार के सिवाय सब को त्याग दिया। सब दलों को बेलगांव आने का निमंत्रण दिया पर यह प्रार्थना बहरे कानों पड़ी। आशाजनक फल न हुआ। बेलगांव की कांग्रेस, कांग्रेस के इतिहास में कई दृष्टियों से अपूर्व हुई। म. गान्धी सभापति थे। अराजनैतिक कार्यक्रम स्वीकार किया गया। व्यक्तिपूजावाद की वेदी पर सब सिद्धान्तों का बलिदान किया गया। अपनी स्वतंत्र सम्मति और विवेक बुद्धि को प्रतिनिधियों ने गान्धी भक्ति पर चढ़ा दिया। कांग्रेस के विद्रोही दल स्वराज्य दल ने भी मूक भाव से नतमस्तक हो इसे स्वीकार कर लिया। कांग्रेस का उत्कर्ष बढ़ता गया। कौन्सिल के अखाड़े में स्वराज्य दल ने अपूर्व विजय प्राप्त की। भारत की न्यूनतम मांग, सभापति निर्वाचन, बंगाल ऑर्डिनेंस का आलोचना करना, स्वराज्य इन्स्पेक्टर हटा लेने का प्रस्ताव पास करना [illegible] के समय की गहरी विजय से जहां स्वराज्य दल का गौरव बढ़ रहे थे वहां बंगाल और युक्तप्रदेश के सभापति निर्वाचन की हार भी कम शानदार न थी। पं. श्री दास थे एकाएक उठ

जाने से स्वराज्य दल की अवस्था बदल गई। आज स्वराज्य दल के प्रधान नेता कमीशनों और कमेटियों के सभासद होना अनुचित नहीं समझते। Honourable Co-operation सम्मान पूर्वक पूर्ण सहयोग का प्रतिदिन अवसर ढूंढा करते हैं। जिनको एक दिन ठुकरा दिया था, जिन पदों के लेने वालों को देशद्रोही कहा जाता था उन्हीं त्याज्य वस्तुओं को लेने के लिए स्वराज्य दल के सदस्य लगातार करने से नहीं चूकते। पटना कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन ने स्थिति बदल दी है। स्वराज्य दल के हाथ में पूर्ण शक्ति देकर एकता का मार्ग बन्द कर दिया है। चार आने का प्रवेश शुल्क देकर सब के आने के लिए द्वार खोल दिया गया है। यह परिवर्तन स्वराज्य दल की तोंद बढ़ाने वाला अवश्य होगा पर अन्तरीय शक्ति को बढ़ाने में सहायक न होगा।

× × ×

ब्रिटेन से सहयोग की चर्चा सालभर रही। इस सहयोग को प्राप्त करने के लिए स्व. देशबन्धु ने राष्ट्रीय स्वतंत्रता के झण्डे को भी झुका दिया पर वायसराय की यात्रा और उनकी भारत मंत्री से प्रकाशित बातचीत का नतीजा जो प्रकाशित हुआ उससे भी अपनी भूल न समझ कर सम्मान पूर्ण सहयोग को ढूंढने में अभी तक चिन्तित हैं।

असहयोग को सदा के लिए दफना दिया गया है। उसकी कब्र पर आज सहयोग का झण्डा फहरा रहा है। कलकत्ता कांग्रेस के समय जो नया अध्याय प्रारम्भ हुआ था उसका अन्त पटना में हो गया। आज देश सहयोग की आवाज़ से गूंज रहा है। स्वराज्य दल के अध्वर्यु 'सहयोगाय स्वाहा' कह आहुतियां दे रहे हैं।

× × ×

श्रीमती बेसेन्ट ने एक कौमनवैल्थ के बिल के रूप राष्ट्र की इच्छा पेश करने का संकल्प किया। ब्रिटिश साम्राज्य की छत्र छाया में भारतीय स्वाधीनता का मन्दिर निर्माण हो; भारतीय स्वराज्य का वृक्ष फूले फले। परन्तु जिनको असह्य है उनके लिए इस पर विचार करना समय व्यर्थ गंवाना है। पर जो ब्रिटिश साम्राज्य में भारतीय सुख शान्ति देखना चाहते हैं एक वृक्ष की एक शाखा के दो फलों में ब्रिटेन और भारत को देखना चाहते हैं उसका [illegible] कर स्वागत नहीं करते न समर्थन करते हैं। महाप्रभुओं द्वारा अस्वीकार हो जाने के अपमान से भयभीत होते हैं।

× × ×

साम्प्रदायिकता की विषैली हवा और लीग बेग से बहती रही। शान्ति की भीत्तियां हिलाने वाले

विजय वेज मनी ·

हिलाते रह गए। पर विनाशकारी रुकवाने में न सकी। विश्व विभूति का उपवास निरर्थक सिद्ध हुआ। एक ओर शान्ति पाठ के मंत्रों का उच्चारण किया जा रहा था दूसरी ओर सिर फोड़े जा रहे थे और प्रेस द्वारा एक दूसरे का गला घोंटा जा रहा था। आज एकता की प्रतिमा ने भी इस रक्त प्रवाह के सन्मुख से हटना ही उचित समझा है।

× × ×

जिसकी वाणी के प्रभाव से राष्ट्र उठ बैठा, जागरण के प्रारम्भ में जिसकी ओजस्वी वाणी और अपूर्व आत्मबल ने राष्ट्र को मार्ग दिखाया और आत्म-दर्शन कराये उस महान आत्मा के चरणों में लाखों ने मथुरा नगरी में एकत्रित होकर अपनी श्रद्धा पुष्पाञ्जलि चढ़ाई। यह श्रद्धा का प्रवाह महर्षि के अनुयायियों को एक सम्प्रदाय में परिवर्तित कर देगा या संसार को सेवक एक [illegible] यह भविष्य बतायेगा।

× × ×

जिसके वीरता पूर्ण बलिदान पर देश मुग्ध था संसार दाँतों तले उंगली दबा कर आँखें फाड़ कर देख रहा था। मगध की आपने शत्रु की [illegible] देखकर फूले न समाते थे जैसे और बावकीम का युद्ध समाप्त हो गया। सफलता का ताज वीरों को पहना दिया गया। इस घोर अन्धकार के बीच में यही एक प्रकाश की उज्ज्वल किरण है।

जिस पर देश गर्व कर सकता है।

× × ×

हमारा [illegible] अपमान हुआ, हमारे जीवन का मूल्य कूता गया इसकी कथा बड़ी हृदय द्रावक है। प्रवासियों की कथा लिखने के लिए इस लेखनी में सामर्थ्य नहीं है। प्रवासी भारतीय निकाले जा रहे हैं, अपने स्वत्वों से वञ्चित किए जा रहे हैं, मनुष्य मात्र के अधिकार से भी वञ्चित किए जा रहे हैं। पर हम लोगों को इस तरफ ध्यान देने का अवसर ही नहीं मिलता। एशियाटिक बिल पेश है। ११ अक्टूबर की लम्बी दीन भारत की पुकार परमात्मा के दरबार में सुनाने जा रही है।

× × ×

बवण्डर उठा, आकाश का रंग पीला हुआ, संसार ने समझा युद्ध होने वाला है बन्दूकों का धुंआ भी उड़ा, प्रशान्त महासागर का शान्त जल क्षुब्ध भी हुआ पर शस्त्र जो शत्रुओं को मारने के लिए उठे थे नायकों के भ्रम के कारण आपस में ही चल पड़े। बन्दूकों के कुन्दों का हमला अपने साथियों पर ही हुआ। शत्रुओं की चाल कारगर हुई। एशिया का स्वतंत्रता सूर्य फिर घनघोर बादलों की ओट में छिप गया। सुनहली किरणें जिससे अलपाइ पर्वत माला की बर्फीली चोटियां चमक उठी थीं और हिमालय की हिमाच्छादित धवल शिलाओं पर प्रतिबिम्बित होकर [illegible] को उत्पन्न कर रही थीं विलीन हो गईं।

× × ×

× × ×

भूमध्य सागर के द्वार पर स्थित मोरक्को के रिफ सर्दार अब्दुल करीम की तलवार बराबर तेजी से चमक रही थी। ब्रिटेन और फ्रांस का संयुक्त बल भी सामना न कर सका। आज वह तेज मंद हो गया है पर वीर राणा प्रताप की भाँति पर्वतों में वास कर स्वतंत्रता की ओर अपने देश के गौरव की रक्षा कर रहा है। खनिज पदार्थों का लोभ, टंगियर बन्दरगाह का महत्व, भूमध्य सागर का प्रभुत्व ही उसके नाश के कारण हो रहे हैं। रिफ लोग रणचण्डी की पूजा अपने हृदय के गर्म खून से शिर-पुष्पों से कर रहे हैं यह व्यर्थ न जायेगा।

× × ×

इराक के हृदय पर ब्रिटेन दांत गड़ा रहा है। मोसल का प्राकृतिक किला कुर्दों को अपनी रक्षा के लिए आवश्यक समझते हैं अपनी जान देकर उसको लेंगे। प्रत्येक युवक कटिबद्ध है, मरने मारने को उद्यत है, ब्रिटेन अपने लोगों को भी परवा [illegible] उसको लेने के लिए अपने जंगी [illegible] को प्रस्थान करने की आज्ञा दे रहे हैं। ब्रिटेन भारत पर तथा इराक पर प्रभुत्व जमाने के लिए तथा तेल को लूट लेने के लिए अपने धन जन को पानी की तरह बहाने को उद्यत है। रूस को त्यौरी चढ़ाते देखकर ब्रिटेन के माथे का बल उतर गया है।

× × ×

सब अपने पाँसे फेंक रहे हैं। जर्मनी मौका ताक कर कभी रूस से हाथ मिलाता है तो कभी ब्रिटेन और फ्रांस की ओर कातर दृष्टि से देखता है। लंदन में बैठकर मध्य यूरोप की स्वास्थ्य कामना की जा रही है। शैलों को [illegible] शान्ति और प्रेम का [illegible] [illegible] किया जा रहा है। [illegible] जर्मनी से क्या पौरिक [illegible] रहे हैं। जर्मनी फ्रांस [illegible] को देख कर [illegible] कर रहा है [illegible] [illegible] रहा है।

× × ×

दूरदर्शी राजनीतिज्ञ, भविष्यवादी, आत्मवादी लोग सब एक स्वर से कह रहे हैं कि २५-से ३० के बीच में भयानक युद्ध होने वाला है। सब के दिल [illegible] हैं [illegible] की प्रतीक्षा उत्सुकता से कर रहे हैं। [illegible] स्वागत के लिए ब्रिटेन और अमेरिका [illegible] जलपोत बना रहे हैं। परतंत्र जातियां क्रान्तिजन्य रक्त धारा से स्वागत करने को उत्सुक हैं। एशिया यौरप का [illegible] होकर रहेगा या अपने भाग्यों का मालिक रहेगा इसका निर्णय इस युद्ध में होने वाला है।

× × × ×

[illegible] समय [illegible] संकुल, विकट, कंटीले मार्ग में पग धरती है। भगवान [illegible] करें।

विजय वैजयन्ती

गुरुकुलीय 'ओलिम्पस' पर क्रीड़ा का विराट समारोह

२०-६-८२
गुरुवार

–७ बजे तक राष्ट्रीय झंडे की स्थापना।

वन्दे मातरम्

कुलगीत

'खेलें' —

७ से १०½ तक प्रातः

कुरसी दौड़

चार टांग की दौड़ (प्रथम बार)

चम्मच दौड़

मेंढक दौड़

झण्डी दौड़

अन्य युद्ध

मध्यान्होत्तर

२-३० से ६ तक

लम्बी कूद

ऊंची कूद

टड्डप्पा कूद

तकिया युद्ध

तैरी दौड़

बोरी युद्ध

२१-६-८२
शुक्रवार

प्रातः ७ से १०½ तक

वृक्ष पर चढ़ना

२०० गज की दौड़

बोरी दौड़

~~तकिया युद्ध~~

तेज़ चलना

गोला फेंकना

गेंद फेंकना

सिंह तैरी

विकट तैरी

डुबकी

तमेड़ दौड़

मध्यान्होत्तर

२½ से

तकिया युद्ध (अन्तिम)

चार टांग की दौड़

सवारी दौड़ (Pick-a-back Race)

घाटा दौड़ (अधिकारी वर्ग की) (Handicap Race)

बाधा दौड़

१-७-८२
शनिवार

७ से ८ तक प्रातः

सान्मुख्य (फुटबॉल)

अनन्य और उपाध्याय वर्ग

• विजय – वैजयन्ती •

[illegible]	चार रंग की दौड़	[illegible] दौड़	[illegible] दौड़	[illegible]	अन्ध युद्ध
प्रकाश १३	योगेन्द्रपाल	इन्द्रसेन	देवदत्त	सुरेन्द्र	महावीर
ब्रह्मदत्त	जनार्दन	चन्द्रगुप्त	सुरेन्द्र	धर्मदेव	हरिवंश
हरिवंश	बलराम	जयदेव	ब्रह्मदत्त	हरिवंश	जनार्दन
बलराम	रणधीर	पूर्णचन्द्र	हरिवंश	बलराम	रणधीर
रणधीर	हरिवंश	हरिवंश	जनार्दन	रणधीर	नरेन्द्र
यज्ञदत्त	नरेन्द्र	सुरेन्द्र	बलराम	नरेन्द्र	जगदीश
अवनीन्द्र	वेदप्रकाश	ब्रह्मदत्त	रणधीर	जगदीश	ब्रह्मदत्त
नरेन्द्र	योगीराज	जनार्दन	नरेन्द्र	इन्द्रसेन १२	वेदप्रकाश
जगदीश	भीमसेन	बलराम	इन्द्रसेन	जयदेव	भीमसेन
योगेन्द्र	शिवप्रसाद	नरेन्द्र	जयदेव	समरसिंह	भीमसेन
योगराज	इन्द्रसेन	वेदप्रकाश	समरसिंह	भीमसेन ११	इन्द्रसेन
भीमसेन ११	जयदेव	योगीराज	भीमसेन	देवदत्त	देवदत्त
शिवप्रसाद	समरसिंह	प्रकाश १२		भीमसेन	पूर्णचन्द्र
इन्द्रसेन	देवदत्त	भीमसेन			भीमसेन
जयदेव	भीमसेन	शिवप्रसाद			अवनीन्द्र
समरसिंह	कृष्णदत्त	समरसिंह			
देवदत्त		देवदत्त			
भीमसेन १२		भीमसेन			
ओम्प्रकाश		कृष्णदत्त			
कृष्णदत्त		अवनीन्द्र			

— सूचना —

आवश्यकतानुसार इन नामों में वृद्धि भी की जा सकती है।

२

म० वाग्वर्धिनी सभा का भावी कार्यक्रम

भावीय व्यवस्थापक सभा की बैठक ... २६ अक्टूबर

जातीय महासभा .... दिसम्बर का प्रथम सप्ताह

जन्मोत्सव .. दिसम्बर का द्वितीय सप्ताह

कविता सम्मेलन ... गुरुकुल वार्षिकोत्सव पर

वाद विवाद का अधिवेशन .... २ नवम्बर

वाद विवाद का विषय- "जनतन्त्र और एक तन्त्र राज्य में कौन श्रेष्ठ है ?"

नोट - इस कार्यक्रम में परिवर्तन भी किया जा सकता है।

भवदीय
मन्त्री

सम्पादक की डाक

(राजहंस के कार्यालय से प्राप्त)

सेवा में —

संयुक्त राष्ट्रीय और मजदूर

दल के सदस्यों के —

प्रिय बन्धु गण !

आप के सहयोग और कर्तव्य निष्ठा की बदौलत राष्ट्रीय दल और मजदूर दल का गौरव कायम रहा। उस की मान मर्यादा सुरक्षित रही और राष्ट्र के सूत्र लेने में सफल हुआ।

इस प्रसन्नता के समय में मैं आप को विनीत भाव से बधाई देता हूं। आशा है आगे भी आप इसी तत्परता से और कर्तव्य निष्ठा से दल की रक्षा के लिये उद्यत रहेंगे।

भवदीय

मन्त्री

अवनीन्द्र

संयुक्त राष्ट्रीय तथा मजदूर

दल

प्रिय बन्धु गण !

आप के हाथ में अपने विनम्र सेवकों के मान करने की सब से उत्तम जो वस्तु है ; वह गौरवमय आसन, वह स्वर्णमय सूत्र आप ने हमारे इन अनुभव हीन अनाड़ी हाथों में सौंपा है। आप की इच्छा के सामने, अपनी इच्छा को तुच्छ समझते हुए उस को स्वच्छ और स्वच्छ कर ; हम अपना नत मस्तक करते हैं। हम विनम्र भाव से उस सहयोग - जिस के हम अधिकारी हैं - को अभिलाषी हैं ; जो हमारे से पूर्व कार्यकर्ताओं को आप द्वारा प्राप्त होता रहा है। हम यथाशक्ति सभा की परम्परा और गौरव को कायम रखने में कसर न उठा रखेंगे। फिर भी सभा की उन्नति और अवनति, सफलता और असफलता आप के हाथ में है। सभा के आप स्वामी हैं, हम केवल आप की आज्ञा पालन करने वाले हैं। हम अपने सभा के पूर्व कार्यकर्ताओं से तथा वर्तमान कार्यकारिणी मंडल से विनम्र भाव से सहयोग की याचना करते हैं। हमें विश्वास है और आशा है कि हमारी प्रार्थना सुनी जायगी।

भवदीय अनुग्रहाभिलाषी

अवनीन्द्र (मंत्री)

नरेन्द्र (प्रधान)

वाग्वर्धिनी सभा